नम्र-निवेदन

भारतीय संस्कृति और सनातन धर्मका ज्ञान अपौरुषेय वेद, उपनिषद्, स्मृतियाँ तथा इतिहास-पुराण आदि ग्रन्थोंसे हमें प्राप्त होता है। ऋतम्भरा ज्ञानसे युक्त ऋषि-महर्षियोंद्वारा जो शास्त्रका उद्‌बोधन हुआ, वही अपना कल्याण चाहनेवाले आस्तिकजनोंके लिये प्रमाण है। श्रीमद्भगवद्‌गीतामें अर्जुनके प्रश्न करनेपर भगवान् श्रीकृष्णने स्वयं कहा—

तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्यव्यवस्थितौ।
ज्ञात्वा शास्त्रविधानोक्तं कर्म कर्तुमिहार्हसि॥

(गीता १६। २४)

क्या करना चाहिये और क्या नहीं करना चाहिये—इसमें शास्त्र ही प्रमाण है—यह समझकर शास्त्रविधिसे निश्चित किये हुए कर्म ही करने योग्य हैं।

इतना ही नहीं भगवान् और भी कहते हैं—

यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः।
न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम्॥

(गीता १६। २३)

जो पुरुष शास्त्रविधिको त्यागकर अपनी इच्छासे मनमाना आचरण करता है, वह न तो सिद्धिको प्राप्त होता है, न परमगतिको और न उसे सुखकी प्राप्ति होती है।

अतः आध्यात्मिक रूपमें अपना कल्याण चाहनेवाले व्यक्तिको शास्त्रमें पूर्ण विश्वास रखकर शास्त्रद्वारा प्रतिपादित व्यवस्थाके अनुसार अपनी उपासना-साधना और पूजा करनी चाहिये।

नवीन विश्वनाथमन्दिरकी स्थापना क्यों करनी पड़ी?—इसका ज्ञान इस पुस्तकसे हो सकेगा।

शास्त्रानुसार प्राणप्रतिष्ठा पूजा-अर्चा होनेपर ही मूर्तिमें देवत्वका आधान होता है और शास्त्र-मर्यादाका उल्लंघन होनेपर उस मूर्तिमें देवत्वकी हानि होती है अर्थात् देवता उस मूर्तिमें नहीं रहते तथा उसके पूजककी भी आध्यात्मिक रूपसे हानि होती है।

इस बातको ध्यानमें रखते हुए पुराने मन्दिरमें शास्त्रीय मर्यादाके नष्ट होनेपर सन्त-महात्माओं और विद्वज्जनोंकी सम्मतिसे श्रीकाशीविश्वनाथके नवीन मन्दिरकी स्थापना की गयी। जहाँ शास्त्रीय विधि-विधानसे भगवान् विश्वनाथकी प्रतिष्ठा हुई तथा पूजा-अर्चाकी व्यवस्था भी शास्त्रानुसार है, साथ ही यह मन्दिर आजके समयमें भारतवर्षके अन्य मन्दिरोंके लिये एक आदर्शरूप है, जहाँ शास्त्रीय मर्यादाको सुरक्षित रखते हुए सबको समानरूपमें दर्शन-पूजनका अधिकार प्राप्त है तथा आधुनिक परिवेशमें कानूनकी रक्षा होते हुए सभीको बराबरी और समानताका अनुभव हो सके—इसकी व्यवस्था भी स्वाभाविक रूपमें है। इस प्रकार इस पुस्तकसे सब बातें स्पष्ट हो सकेंगी।

भवदीय
सचिव
श्रीकाशीविश्वनाथ व्यक्तिगत मन्दिर समिति
वाराणसी

विषय-सूची

१. **श्रीकाशीविश्वनाथमन्दिरका इतिहास** १
- ✿ काशीविश्वनाथमन्दिरके मूल ज्योतिर्लिंगकी स्थिति १
- ✿ काशीविश्वनाथमन्दिरकी स्थापना १०
- ✿ स्वतन्त्रताप्राप्तिके अनन्तर नया कानून १०
- ✿ दर्शनका सबको समान अवसर प्राप्त होनेका उपाय १२
- ✿ मन्दिर-प्रवेशके लिये आन्दोलन १३
- ✿ शास्त्रानुसार काशीविश्वनाथके दर्शनकी समस्या १३
- ✿ विद्वद्-गोष्ठीमें दर्शनके लिये नवीन व्यवस्थाका निर्णय १५

२. **नवीन विश्वनाथमन्दिरका निर्माण** १६
- ✿ मन्दिरके शिलान्यासका सम्पादन १६
- ✿ बाणगंगासे काशीविश्वनाथ-शिवलिंगका शुभागमन १७
- ✿ काशीविश्वनाथकी शोभायात्रा एवं समारोह १८
- ✿ भगवान् विश्वनाथकी प्राण-प्रतिष्ठा १९
- ✿ श्रीविश्वनाथजीका भव्य शृंगार एवं राजोपचार-पूजन २०

३. **मन्दिरकी स्थायी व्यवस्था** २१
- ✿ काशीविश्वनाथका स्वप्नमें दर्शन २१
- ✿ मन्दिरमें पंचदेवोंकी उपासना २२
- ✿ राजभोग एवं भण्डारा २२
- ✿ 'श्रीकाशीविश्वनाथ व्यक्तिगत मन्दिर' नामकरणका कारण २३
- ✿ पुराने मन्दिरका स्वर्णशिखर २३
- ✿ मन्दिरमें होनेवाली अर्चा-पूजाका कार्यक्रम २४
- ✿ बाहरसे पूजनकी व्यवस्था २५

४. **श्रद्धालुजनोंके लिये मन्दिरमें पूजा-अर्चा एवं अनुष्ठानकी विशेष व्यवस्था** २५
- ✿ स्वयं तथा विद्वान् पण्डितोंद्वारा पूजन करने एवं करानेकी व्यवस्था २५
- ✿ गर्भमन्दिरसे प्राप्त लिंगका पूजन २५
- ✿ लघुरुद्र २६
- ✿ महारुद्राभिषेक २६
- ✿ सहस्रार्चन २६
- ✿ जप-अनुष्ठान २६
  - (क) महामृत्युंजय जप २७

(ख) विभिन्न ग्रहोंके जप एवं ग्रहशान्ति २७
✿ सम्पुटसहित दुर्गासप्तशतीपाठ २७
✿ श्रीमद्भागवत-पाठ २७
✿ रामायण एवं विभिन्न पुराणोंका पारायण २७
✿ विशेष अनुष्ठान २७
✿ गोदान २८
५. सिद्धपीठमें अर्चा-पूजा एवं अनुष्ठानकी सफलता २९
६. मन्दिरमें सम्पन्न होनेवाले विभिन्न पर्वोंके समारोह २९
✿ महाशिवरात्रिपर्व २९
✿ रामनवमी-उत्सव २९
✿ गुरुपूर्णिमा-महोत्सव ३०
✿ श्रावणके सोमवार ३०
✿ श्रावणीपूजन ३०
✿ जन्माष्टमी-महोत्सव ३०
✿ कुशोत्पाटिनी-अमावस्या ३१
✿ गणेशचतुर्थी ३१
✿ अन्नकूट-समारोह ३१
✿ विवाह-पंचमी ३१
✿ रंगभरी एकादशी ३१
७. वर्तमान समयमें राजभोग एवं भण्डारा ३२
८. मन्दिरसे सम्बद्ध संस्थाएँ ३२
✿ वेदविद्यालय ३२
✿ विश्वनाथजीकी गोशाला ३३
✿ सत्संग-भवन एवं यज्ञशाला ३४
✿ अतिथिगृह ३४
✿ वेद-शास्त्रानुसन्धान-केन्द्र ३४
९. मन्दिरकी स्थापनाके अवसरपर अनन्तश्री स्वामी करपात्रीजी महाराजका वक्तव्य ३५
१०. वियोगीहरिजीका स्वामीजीको पत्र ४४
११. वियोगीहरिजीको श्रीस्वामीजीका उत्तर ४६
१२. नये विश्वनाथमन्दिरकी स्थापनाके औचित्यके सम्बन्धमें पूज्य आचार्य महानुभावोंके विचार ५१

✿ सभी सम्प्रदायके प्रधान पुरुषोंका संगठित होना परमावश्यक
[जगद्गुरु शंकराचार्य अनन्तश्रीविभूषित स्वामी श्रीनिरंजनदेवजी तीर्थ, पुरीपीठाधीश्वर] ५१
✿ शास्त्रीय परम्परा और नया विश्वनाथमन्दिर
[अनन्तश्रीविभूषित जगद्गुरुशंकराचार्य ज्योतिष्पीठाधीश्वर स्वामी श्रीस्वरूपानन्द सरस्वतीजी महाराज, ज्योतिर्मठ बदरिकाश्रम] ५४
✿ नवीन काशीविश्वनाथमन्दिरमें ही दर्शन करें एवं कल्याण प्राप्त करें
[जगद्गुरुशंकराचार्य काशीपीठाधीश्वर परमहंस श्रीमहेश्वरानन्द-सरस्वतीजी महाराज] ५९
✿ श्रीकाशीविश्वनाथमन्दिर एवं शास्त्रीय मर्यादा
[अनन्तश्रीविभूषित स्वामी श्रीहरिहरानन्दसरस्वती (श्रीकरपात्रीजी महाराज)] ६१
✿ श्रीकाशीविश्वनाथमन्दिरकी उपादेयता
[पण्डितराज आचार्य श्रीकालीप्रसाद मिश्र, भू०पू० अध्यक्ष संस्कृत महाविद्यालय] ६२
✿ 'ईशानः सर्वविद्यानाम्'
[ब्रह्मर्षि पं० श्रीपट्टाभिरामजी शास्त्री मीमांसा-केशरी, शास्त्ररत्नाकर] ६३
✿ सनातन मूल्योंका प्रतीक—श्रीकाशीविश्वनाथमन्दिर
[विद्वत्-शिरोमणि श्रीमार्कण्डेयजी ब्रह्मचारी] ६६
✿ काशीविश्वनाथकी स्थापनासे शास्त्रमर्यादा सुरक्षित
[श्रीसीतारामजी कविराज, श्रीविद्याभास्कर] ७२
✿ विश्वनाथ महादेव
[प्राणाचार्य कविराज श्रीहरिवक्षजी जोशी, काव्य-सांख्यस्मृतितीर्थ] ७४
✿ नवीन श्रीकाशीविश्वनाथमन्दिर
[श्रीसीतारामजी खेमका, संस्थापक-प्रबन्धक एवं सचिव, नवीन श्रीकाशीविश्वनाथमन्दिर, वाराणसी] ७६
✿ नवीन काशीविश्वनाथमन्दिरमें चारों साधन एक साथ सुलभ
[श्रीराधेश्यामजी खेमका, एम०ए०, साहित्यरत्न, काशी] ७८
✿ नवीन काशीविश्वनाथमन्दिर ईश्वरेच्छाका प्रतीक
[श्रीबाबूलाल गनेड़ीवाला, कलकत्ता] ८०
✿ धार्मिक कार्योंमें धर्माचार्योंका आदेश सर्वोपरि
[श्रीहनुमानप्रसादजी धानुका, कलकत्ता] ८२

१५. स्तुति-प्रार्थना ८३
- श्रीविश्वनाथाष्टकम् ८३
- भगवान् गङ्गाधरकी आरती ८६
- भगवान् महादेवकी आरती ८८

चित्र-सूची

काशीविश्वनाथमन्दिरकी कुछ झाँकियाँ

१. मन्दिर-परिसरमें स्थापित सिद्धलक्ष्मीसहित श्रीमहागणपति
२. श्रीविश्वनाथजीका दुग्धाभिषेक
३. महाशिवरात्रिके शुभ अवसरपरश्रीविश्वनाथलिङ्गका समवेत स्वरमें वैदिक मन्त्रोंद्वारा रुद्राभिषेक
४. श्रीविश्वनाथजीके पूर्ण शृंगारकी एक मनोरम झाँकी
५. श्रीविश्वनाथजीकी शृंगार आरतीका दृश्य
६. महाशिवरात्रिपर्वपरश्रीविश्वनाथ भगवान्की विशेष आरतीका दृश्य
७. मन्दिर-प्रांगणमें विद्वान् पण्डितोंद्वारा पूजन एवं रुद्राभिषेक
८. मन्दिर-परिसरमें दण्डी स्वामी-संन्यासीगणोंका भण्डारा
९. मन्दिर-परिसरमें ब्राह्मणभोजन एवं भण्डारेका दृश्य

काशीविश्वनाथमन्दिरके संस्थापक महापुरुष

१०. अनन्तश्रीविभूषित स्वामी श्रीहरिहरानन्दजी सरस्वती (अभिनवशंकर श्रीकरपात्रीजी महाराज)
११. अनन्तश्रीविभूषित जगद्गुरु शंकराचार्य ज्योतिष्पीठाधीश्वर स्वामी श्रीकृष्णबोधाश्रमजी महाराज, ज्योतिर्मठ बदरिकाश्रम
१२. जगद्गुरु शंकराचार्य अनन्तश्रीविभूषित स्वामी श्रीनिरंजनदेवजी तीर्थ गोवर्धनपीठाधीश्वर, पुरी
१३. अनन्तश्रीविभूषित जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्रीस्वरूपानन्दजी सरस्वती
१४. जगद्गुरु शंकराचार्य काशीसुमेरुपीठाधीश्वर परमहंस श्रीमहेश्वरानन्दजी सरस्वती महाराज
१५. काशीपीठाधीश्वर रामानुजाचार्य श्रीदेवनायकाचार्यजी महाराज
१६. वीतराग स्वामी श्रीनन्दनन्दनानन्दजी सरस्वती (श्रीशास्त्री स्वामी)
१७. मन्दिरके संस्थापक सचिव एवं गोभक्त श्रीसीतारामजी खेमका

काशीविश्वनाथमन्दिरकी कुछ झाँकियाँ

१-मन्दिर-परिसरमें स्थापित सिद्धलक्ष्मीसहित श्रीमहागणपति

श्रीकाशीविश्वनाथमन्दिरका इतिहास

शास्त्रोंमें वाराणसी और भूतभावन भगवान् विश्वनाथकी अतुल महिमाका वर्णन है। भगवान् विश्वनाथ स्वयं कहते हैं—**'परमगुह्यतमं क्षेत्रं मम वाराणसी पुरी'** वाराणसी हमारा परम गुह्यतम अर्थात् परम रहस्यपूर्ण स्थान है। इस क्षेत्रकी विशेषता यही है कि यहाँ मरनेमात्रसे मुक्ति प्राप्त होती है। **'मरणं मङ्गलं यत्र'** यहाँ मृत्यु भी मंगलकारी है। मनुष्य क्या पशु-पक्षी, कीट-पतंग सभी प्राणी काशीमें मरनेमात्रसे जन्म-मरणके बन्धनसे मुक्त हो जाते हैं। यह सब भूतभावन भगवान् विश्वनाथकी कृपासे ही होता है। इसलिये यह कहा जाता है कि यहाँ भगवान् विश्वनाथका मुक्तिका सदावर्त चलता रहता है।

काशीविश्वनाथमन्दिरके मूल ज्योतिर्लिंगकी स्थिति

शास्त्रोंके अनुसार बारह ज्योतिर्लिंगोंके अन्तर्गत काशीमें भूतभावन विश्वनाथ ज्योतिर्लिंगके रूपमें विराजमान हैं, परंतु दुर्भाग्यवश अनादिकालसे स्थापित मूल ज्योतिर्लिंग विधर्मियोंके आक्रमणके कारण आज उपलब्ध नहीं है। 'काशीखण्ड' एवं 'काशीरहस्य' आदि ग्रन्थोंके अनुसार भगवान् विश्वनाथका मूल ज्योतिर्लिंग वाराणसीमें एक निश्चित स्थानपर स्थापित था, परंतु कालवशात् उसके लुप्त हो जानेसे शास्त्रविश्वासी आस्तिकजनोंने कालान्तरमें पुनः श्रीविश्वनाथके नामसे दूसरे लिंगकी स्थापना की; इस प्रकार लिंगान्तरकी स्थापनाका क्रम निरन्तर चलता रहा। जब-जब विधर्मियोंने बलपूर्वक पूर्वस्थापित लिंगकी शास्त्रीय मर्यादा नष्ट कर दी, तब-तब विभिन्न स्थानोंमें शास्त्रीय विधिसे लिंगान्तरकी स्थापना कर दी गयी। धर्मशास्त्रोंके प्रकाण्ड विद्वान् श्रीनारायणभट्टने अपने ग्रन्थ 'त्रिस्थलीसेतु' में शास्त्रीय प्रमाणोंके आधारपर स्पष्ट लिखा है कि **'अथ लिङ्गमपनीयते, कालवशात् पुरुषैः लिङ्गान्तरमानीयते'** अर्थात्

शास्त्रीय मर्यादा सुरक्षित न रहनेपर यथासमय आस्तिकोंद्वारा लिंगान्तरकी स्थापना होती आयी है।

काशीविश्वनाथमन्दिरकी स्थापना

प्रथम विश्वनाथमन्दिर कहाँपर था—इसका कोई भी ऐतिहासिक पुष्ट प्रमाण नहीं मिलता है। छठी शताब्दीमें भारत आये चीनी यात्री ह्वेनसांगके लेखसे अनुमान लगाया जाता है कि प्रथम विश्वनाथमन्दिर मणिकर्णिका, श्मशानघाटके निकट कहीं था। सन् ११९३ ई०में मुहम्मद गोरीके सेनापति कुतुबुद्दीन ऐबकने इस मन्दिरको तोड़ दिया था। इसके बाद ४०० वर्षतक काशीमें विश्वनाथजीका कोई विशाल मन्दिर नहीं था। छोटे-छोटे मन्दिरोंमें आस्तिक लोग दर्शन-पूजन किया करते थे। वे भी समय-समयपर विधर्मी शासकोंद्वारा नष्ट कर दिये जाते थे। १६वीं शताब्दीमें काशीविश्वनाथका कोई छोटा मन्दिर भी नहीं रह गया था।

सन् १५८५ ई०में सम्राट् अकबरके अर्थमन्त्री टोडरमलके सहयोगसे त्रिस्थलीसेतुकार श्रीनारायणभट्टने ज्ञानवापीके प्रांगणमें एक विशाल विश्वनाथमन्दिर बनवाया। इस विशाल मन्दिरको सन् १६६९ ई०में धर्मान्ध मुगलशासक औरंगजेबद्वारा खण्ड-खण्ड करके उसपर मस्जिद बनवा देनेके बाद सन् १७७७ ई० तक अर्थात् लगभग ११० वर्षोंतक शिवभक्त ज्ञानवापीकुण्डमें ही जल चढ़ाया करते थे। सन् १७७७ ई०में इन्दौरकी महारानी देवी अहिल्याबाईने वर्तमानमें स्थित यह प्राचीन मन्दिर बनवाया और नार्मद बाणलिंगकी शास्त्रीय विधिसे प्रतिष्ठा करवायी। तबसे लेकर सनातनधर्मी आस्तिक्जनोंद्वारा इस मन्दिरमें भगवान् विश्वनाथकी पूजा-अर्चा-उपासना होती रही।

स्वतन्त्रताप्राप्तिके अनन्तर नया कानून

भारतके स्वतन्त्र होनेके बाद भारतीय संसद्में कुछ नये कानून बनाये गये, जिनके द्वारा शास्त्रोक्त अस्पृश्यों (अन्त्यजों आदि)-को मन्दिरोंमें प्रवेश, दर्शन-पूजन आदि मान्य कर दिया गया। इसके अनन्तर कुछ नेतागण जुलूस निकालकर मन्दिरोंमें हरिजनोंका प्रवेश करानेका प्रयास करने लगे

तथा कुछ स्थानोंमें पुलिस आदिके बलपर प्रवेश कराया भी गया। इन नेताओंका यह तर्क था कि मानव-मानव एकसमान हैं, इनको मूर्तिपूजासे वंचित क्यों रखा जाय? इससे इनमें हीनभावना आती है तथा इन्हें बराबरीका अनुभव नहीं होता। शास्त्रविश्वासी आस्तिकोंका कहना था कि सनातनधर्मी मूर्तिमें पत्थरकी पूजा नहीं करते, बल्कि शास्त्रके अनुसार मूर्तिमें आवाहित परमात्मतत्त्व या देवत्वकी पूजा करते हैं। मन्दिरमें जाकर मूर्तिमें भगवान्की पूजाका आधार शास्त्र ही हैं, इसीलिये बाजारमें बिकनेवाली मूर्तियों तथा अजायबघरमें रखी मूर्तियोंके प्रति पूजा करनेकी श्रद्धा नहीं होती। शास्त्रविधिद्वारा मन्दिरमें प्रतिष्ठापित मूर्तिकी ही श्रद्धापूर्वक पूजा की जाती है, अतः शास्त्रविधिके अनुसार ही मूर्तिमें देवत्व आता है, उसी तरह शास्त्रविधिका उल्लंघन होनेसे मूर्तिसे देवत्व चला भी जाता है फिर पुनः प्रतिष्ठा तथा प्रायश्चित्त आदि किये बिना मूर्तिका दर्शन, पूजन आदि हानिकारक ही नहीं पूजकके सर्वनाशका कारण भी बन सकता है।

हमारे शास्त्रोंको मनुष्य क्या पशु-पक्षी, कीट-पतंग आदि सभी प्राणियोंका कल्याण अभीष्ट है। सनातन धर्मका मुख्य आधार है—वर्णाश्रम-व्यवस्था। वर्णाश्रम-व्यवस्थाके अनुसार अपनी योग्यता और परिस्थितियोंके अनुरूप शास्त्र ईश्वरकी अर्चा-पूजा एवं उपासनाका मार्गदर्शन करते हैं। शास्त्रोंने मन्दिरोंमें जिनका प्रवेश निषिद्ध बताया, उनके लिये शास्त्र ही मन्दिरके शिखरदर्शनकी विधि बतलाते हैं और इससे उन्हें वही फल प्राप्त होता है, जो अन्दर मूर्तिकी पूजा-अर्चा करनेवालोंको मिलता है।

अपना इतिहास साक्षी है—ऐसे बहुत सारे उदाहरण प्राप्त हैं, जिनमें कि अन्त्यजोंने शास्त्रोंकी आज्ञाका अनुसरणकर परम आध्यात्मिक उन्नति की है। महाभारतके धर्मव्याध, चिदम्बरम्के नन्द, महाराष्ट्रके चोखामेला, बंगालके हरिदास, कर्नाटकके हरिदास, उत्तरप्रदेशके रैदास आदि कई ऐसे सन्त-महात्मा अन्त्यज जातियोंमें हुए हैं, जिन्हें मन्दिर-प्रवेशके निषेधने उनकी आध्यात्मिक उन्नतिमें कोई बाधा नहीं डाली। आज भी भारतके आस्तिकजन श्रद्धान्वित होकर उन्हें नमन करते हैं। इन महापुरुषोंने अपने

कर्तव्य कर्मोंको करते हुए शास्त्रोक्त विधिसे अपनी उपासनाके द्वारा भगवत्प्राप्तिरूप परम सिद्धि प्राप्त की।

'मानव-मानव एकसमान' का तात्पर्य तो यह है कि सबके लिये बिना किसी भेदभावके रोटी, कपड़ा, इलाज, आवास, शिक्षा आदिकी यथायोग्य व्यवस्था होनी चाहिये। इसका मतलब यह नहीं कि शास्त्रविधिका उल्लंघनकर भगवान्‌की अर्चा-पूजा और उपासना उच्छृंखलतापूर्वक मनमाने तरीकेसे की जाय, जो वास्तवमें उनके अकल्याणका कारण बने। श्रीमद्भगवद्गीतामें भगवान्‌ने स्पष्ट शब्दोंमें कहा—**'तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्यव्यवस्थितौ'** क्या करना चाहिये, क्या नहीं करना चाहिये—इसके लिये शास्त्र ही प्रमाण हैं। **'यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः। न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम्॥'** जो व्यक्ति शास्त्र-विधिको त्यागकर अपनी विधिसे मनमाना आचरण करता है, वह न तो सिद्धिको प्राप्त होता है और न उसे सुख मिलता है तथा परमगति भी प्राप्त नहीं होती।

दर्शनका सबको समान अवसर प्राप्त होनेका उपाय

इन सब दृष्टियोंको ध्यानमें रखकर काशीके आस्तिकजनों और विद्वानोंने श्रीकाशीविश्वनाथके गर्भमन्दिरमें अन्त्यजोंके प्रवेशका विरोध किया। धर्मसम्राट् स्वामी करपात्रीजीके नेतृत्वमें काशीके विद्वानोंने यह निर्णय लिया कि आजके आधुनिक परिवेशमें कानूनका पालन भी हो जाय और मन्दिरकी मर्यादा भी सुरक्षित रहे, इस दृष्टिसे सभीको बिना किसी भेद-भावके गर्भमन्दिरके बाहरसे दर्शन करनेकी व्यवस्था कर दी जाय। भगवान्‌के गर्भमन्दिरमें केवल पुजारियोंका ही प्रवेश हो, जो सबके प्रतिनिधिरूपमें भगवान्‌की पूजा करें। इस प्रकार हरिजनोंको बराबरीका एवं समानताका अनुभव होगा तथा किसी प्रकारके भेदभावकी प्रतीति भी नहीं होगी। सबको भगवान्‌के दर्शनका समान अवसर प्राप्त हो सकेगा। उन दिनों मन्दिरमें पण्डोंका आधिपत्य था, उन्होंने यह कहकर कि आमदनी और चढ़ावा कम हो जायगा, इस प्रस्तावको स्वीकार नहीं किया। इसके साथ

ही हरिजनोंको प्रवेशके लिये प्रेरित करनेवाले नेताओंको भी यह बात स्वीकार नहीं थी। इस प्रकार इस समस्याका कोई समाधान नहीं निकल सका और आन्दोलन चलता रहा।

मन्दिर-प्रवेशके लिये आन्दोलन

कुछ नेताओंकी प्रेरणासे कुछ अन्त्यज जुलूस बनाकर नारे लगाते हुए गर्भमन्दिरमें प्रवेशके लिये आते तथा सनातनधर्मी आस्तिकजन धरना देते हुए उन्हें भीतर जानेसे मना करते तथा बाहरसे दर्शन करनेका आग्रह करते और वे वापस लौट जाते, यह सिलसिला कई वर्षोंतक चला, अन्तमें केन्द्रीय सरकारके आदेशसे पुलिसके बलपर अन्त्यजोंका प्रवेश मन्दिरके गर्भगृहमें सन् १९५७ ई०में करा दिया गया। उन लोगोंने मनमाने तरीकेसे शिवलिंगका स्पर्श आदि भी किया। इस घटनासे काशीके आस्तिकजनोंकी भावनाओंको धक्का लगना स्वाभाविक था तथा स्वाभाविकरूपसे वे क्षोभ और चिन्तासे ग्रसित हो गये। सनातनी आस्तिक जनताने पुराने मन्दिरमें दर्शन-पूजाके लिये जाना बन्द कर दिया, यहाँतक कि काशीनरेश महाराज विभूतिनारायणसिंहने भी इस घटनाके बाद मन्दिरमें प्रवेश नहीं किया।

शास्त्रानुसार काशीविश्वनाथके दर्शनकी समस्या

ऐसी स्थितिमें काशीविश्वनाथभगवान्‌के दर्शन कैसे होंगे—यह प्रश्न आस्तिकोंके मनमें आना स्वाभाविक था। कारण, शास्त्रोंका स्पष्ट वचन है—रजस्वला तथा अन्त्यजके मन्दिरमें प्रवेश करनेसे और मूर्तिस्पर्शसे देवत्वकी हानि होती है, देवताका कोप होता है, मूर्तिमें प्रेत-पिशाचका निवास होता है, उस मूर्तिकी पूजा या दर्शनसे पाप होता है, राज्यकी हानि होती है। यह बातें उन्हीं ग्रन्थोंमें हैं, जिनके आधारपर मूर्तिपूजा चलती है। इसमें किसी प्रकारके तामस क्रोध, शाप अथवा पक्षपातकी कोई बात नहीं है, यह तो शास्त्रकी सम्मति है—

चाण्डालोदक्यादिभिश्च म्लेच्छैर्वा पुल्कसादिभिः।
देवबिम्बे तु संस्पृष्टे चाण्डालश्वपचादिभिः॥

सम्प्रोक्षणं प्रकुर्वीत तद्दोषस्योपशान्तये।
दोषैरुपहतं ज्ञात्वा प्रासादप्रतिमादिकम्॥
असम्प्रोक्ष्यार्चनं कुर्वन् राजानं राष्ट्रमंजसा।
देवतायतनं ग्रामं नाशयेन्नात्र संशयः॥

(ईश्वरसंहिता अ० १९)

अर्थात् चाण्डाल, रजस्वला, म्लेच्छ, पुल्कस, श्वपचादिसे यदि **देवबिम्ब** (लिंग या मूर्ति) छू जाय तो दोषोंकी शान्तिके लिये मन्दिर और **मूर्ति दोनों**की ही शुद्धि करनी चाहिये। '**ज्ञात्वा**' शब्दसे तात्पर्य यह निकलता है कि अज्ञात स्पर्श-दोषका निवारण तो नित्यकी महापूजा आदिसे हो जाता है, परंतु पूर्वोक्त घोषणापूर्वक जुलूस निकालकर किये गये स्पर्श आदि दोषकी जानकारी रहनेपर सम्प्रोक्षण (शुद्धि) बिना किये यदि कोई पूजा करता है तो राजा, शासक, मन्दिर तथा गाँवका भी निश्चित नाश होता है। इस प्रकारके एक नहीं अनेक वचन प्रामाणिक ग्रन्थोंमें प्राप्त हैं।

सामान्यरूपसे मन्दिरोंमें स्थापित मूर्तियोंके दोषयुक्त हो जानेपर अर्थात् श्वपच आदिसे सेवित मूर्तियोंका तो त्याग करके लिंगान्तरकी स्थापना करनेपर पूर्ण शुद्धि होती है—

त्यजेत् सदोषितं लिङ्गं श्वपचाद्यैश्च सेवितम्।
लिङ्गान्तरं प्रतिष्ठाप्य विशुद्धिमधिगच्छति॥

इतना ही नहीं, यहाँतक लिखा है कि अपनी शक्ति और श्रद्धाके अनुसार उत्साहपूर्वक उचित रूपसे प्रायश्चित्त करना चाहिये, अन्यथा सर्वनाश होता है—

'प्रायश्चित्तं यथोत्साहमन्यथासर्वनाशनम्।'

ये सब बातें शास्त्रविश्वासियोंके लिये सत्य हैं, कभी कोई फल विलम्बसे हो सकता है, जैसे पृथ्वीमें बीज बोनेपर तत्काल ही फल नहीं मिल जाता, अपितु कुछ समयकी अपेक्षा रखता है, वैसे ही पापका फल भी तत्काल नहीं मिलता, किंतु पाप करते-करते एक दिन ऐसा आता है कि पाप करनेवालेका जड़मूलसे विनाश हो जाता है।

प्रायश्चित्तद्वारा शुद्धि-विधानके बिना मूर्तियाँ सर्वथा अपूज्य होती हैं—

'अकृतायां तु निष्कृत्यामपूज्यं सर्वथा बुधैः।'

(विष्णुसंहिता २५।६)

शुद्धिके बिना मूर्तिको छूने या पूजनेसे देवता कुपित होते हैं—

'अकृतायां तु निष्कृत्यां स्पृष्टाः कुप्यन्ति देवताः।'

(विष्णुसंहिता २५।५)

यदि प्रायश्चित्त करनेमें विलम्ब होता है तो मूर्तिसे देवसांनिध्य सर्वथा नष्ट हो जाता है और मूर्तिमें प्रेतादिका प्रवेश होता है, जिनके द्वारा प्राणियोंको व्याधि, शोकादिका भय प्राप्त होता है—

विलम्बने तु निष्कृत्या विनश्येद्देवसन्निधिः।
तत्स्थाः प्रेता भयं कुर्युर्व्याधिशोकादिभिर्नृणाम्॥

(विष्णुसंहिता २५।७)

विद्वद्-गोष्ठीमें दर्शनके लिये नवीन व्यवस्थाका निर्णय

शास्त्रोक्त विधि-विधानसे भगवान् काशीविश्वनाथका दर्शन-पूजन सनातनधर्मी आस्तिकोंको प्राप्त हो सके, इसके लिये धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराजकी सन्निधिमें अखिल भारतवर्षीय विद्वत्-परिषद्की सभा आयोजित की गयी, जिसमें वर्तमान परिस्थितियोंपर तथा शास्त्रीय वचनोंपर विचार-विमर्श किया गया।

वर्तमान परिस्थितिमें यदि प्राचीन मन्दिरमें प्रतिष्ठापित शिवलिंगकी पुनर्प्राणप्रतिष्ठा तथा शुद्धि की जाय तो भी भविष्यमें वहाँकी मर्यादा नये कानूनके कारण सुरक्षित नहीं रह सकती, पुनः हरिजन-प्रवेश रोका नहीं जा सकता। दूसरी बात, विश्वनाथजीका मूल ज्योतिर्लिंग उपलब्ध न होनेके कारण पिछले दिनों नार्मद बाणलिंगमें ही भगवान् विश्वनाथजीकी प्रतिष्ठा की गयी थी।

अतः सर्वसम्मतिसे यह निर्णय लिया गया कि **कानूनकी रक्षा करते हुए मन्दिरकी मर्यादा भी सुरक्षित रहे, इस दृष्टिसे विश्वनाथजीका नवीन मन्दिर बनाया जाय, जहाँ पूर्वकी भाँति नार्मद बाणलिंगमें शास्त्रीय विधिके अनुसार भगवान् विश्वनाथकी प्रतिष्ठा की जाय।**

बाहरसे सबको बिना किसी भेदभावके समानरूपसे दर्शन-पूजन करनेका अधिकार हो। गर्भमन्दिरके भीतर केवल पुजारियोंका प्रवेश हो, जो शास्त्रोक्त विधि-विधानसे भगवान्‌की पूजा-अर्चा, भोग-आरती आदि सेवाकार्य सम्पन्न करें।

इस निर्णयकी घोषणा ज्ञानवापीके प्रांगणमें आयोजित विशाल सभामें अनन्तश्री स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराजने बड़े समारोहसे की। महाराजश्रीने बताया कि नवीन मन्दिरका निर्माण तथा भगवान् विश्वनाथकी प्रतिष्ठा-स्थापना शीघ्रातिशीघ्र सम्पन्न होगी—**इस नियमके अनुसार बाहरसे पूजा-अर्चा करनेवालोंके पुण्यमें कोई कमी नहीं होगी। शास्त्रोक्त मर्यादा भी सुरक्षित रहेगी तथा आधुनिक परिवेशमें अन्य मन्दिरोंके लिये भी यह व्यवस्था आदर्शरूप होगी।**

नवीन विश्वनाथमन्दिरका निर्माण

इस प्रकार भगवान् विश्वनाथके नवीन मन्दिरके निर्माणकी योजना बन गयी। आस्तिक भक्तगण पूर्ण उत्साहपूर्वक इस कार्यमें संलग्न हो गये। पुराने विश्वनाथके सन्निकट ही विश्वेश्वरखण्डमें मीरघाटपर पतितपावनी गंगाके पवित्रतटपर एक भक्तने विश्वनाथमन्दिरकी स्थापनाके लिये अपनी जमीन सहर्ष समर्पित कर दी। इस पवित्र कार्यकी सम्पन्नताके लिये आस्तिक भक्तोंने उदार मनसे आर्थिक सहयोग भी प्रदान किया।

मन्दिरके शिलान्यासका सम्पादन

दिनांक १४ फरवरी सन् १९५८ ई० में मन्दिरका शिलान्यास श्रीरामानुजाचार्य देवनायकाचार्यजी महाराजके द्वारा सम्पन्न हुआ। इस अवसरपर अपनी शुभकामना व्यक्त करते हुए उन्होंने कहा कि यह पवित्रतम कार्य शास्त्रप्रामाण्यके आधारपर हो रहा है। सर्वतोभावेन एकमात्र शास्त्रमें विश्वास रखनेवाली आस्तिक जनतासे श्रद्धायुत आन्तरिक भावनाके

आधारपर आज स्वयं भूतभावन विश्वनाथ अपना सांनिध्य पूर्णरूपमें प्रतिष्ठित करनेके लिये हमारे-आपकेद्वारा इस शुभ कार्यका आरम्भ करा रहे हैं। आगे उन्होंने कहा कि '**शिवस्य हृदयं विष्णुः विष्णोश्च हृदयं शिवः।**' भगवान् शिवके हृदय विष्णु और विष्णुभगवान्‌के हृदय शिव हैं। भगवान् विष्णु और भूतभावन भगवान् विश्वनाथमें कोई अन्तर नहीं है। इस ऐतिहासिक मन्दिरके शिलान्यास करनेका अवसर मुझे प्राप्त हुआ, इसका मुझे गर्व है। मैंने यह कार्य कर्तव्यकी दृष्टिसे सम्पन्न किया है। इसके अनन्तर सुमेरुपीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्रीमहेश्वरानन्द सरस्वतीजीने अपनी शुभकामना व्यक्त की। अन्तमें अनन्तश्रीविभूषित स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराजने भी आशीर्वाद प्रदान किया।

बाणगंगासे काशीविश्वनाथ-शिवलिंगका शुभागमन

शीघ्रताकी दृष्टिसे भगवान् विश्वनाथकी प्रतिष्ठाके लिये तत्काल काष्ठका गृहनिर्माण हो गया।

लगभग एक पक्ष पहलेसे ही नर्मदा नदीके बाण-कुण्डके तटपर पवित्र विद्वान् ब्राह्मणोंद्वारा शिवपंचाक्षर मन्त्रका शास्त्रोक्त संख्याके अनुसार जप सम्पन्न होनेके अनन्तर श्रीविश्वनाथलिंग निकाला गया और महाराजा मैहर अपने राजपण्डित एवं व्यक्तिगत सचिवकी देखरेखमें उक्त श्रीविश्वनाथलिंगको काशी लाये। मार्गमें यथाविधि अनवरत पूजा-अर्चाके साथ १० फरवरी सन् ५८ ई०को रात्रि ९ बजे भगवान् श्रीविश्वनाथ काशी पधारे, विद्वानोंने वेदध्वनिसे श्रीविश्वनाथका स्वस्तिवाचन किया।

१५ फरवरी सन् ५८ ई०से श्रीविश्वनाथ-स्थापना-समारोहमें भाग लेनेके लिये सनातनी नेता पधारने लगे। उनमें विशेष उल्लेख्य जन थे—द्वारका-शारदापीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य अनन्तश्रीविभूषित श्रीअभिनव सच्चिदानन्द तीर्थजी महाराज, जगद्गुरु शंकराचार्य ज्योतिष्पीठाधीश्वर अनन्तश्रीविभूषित श्रीकृष्णबोधाश्रमजी महाराज, धर्मसम्राट् अनन्तश्रीविभूषित स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज आदि।

१६ फरवरीको श्रीविश्वनाथका नार्मदलिंग गंगातरंग नगवासे मीरघाट

(स्थापना-स्थल) लाया गया और प्रतिष्ठाकी विशेष पूजन-विधि प्रारम्भ हो गयी, जो पाँच दिनोंतक चलती रही। श्रीविश्वनाथ-प्रतिष्ठा-समारोहका आचार्यत्व काशीके प्रसिद्ध विद्वान् वेदमूर्ति श्रीगणपति दीक्षितजीने किया और यजमानत्व तपोमूर्ति अभिनवपाणिनि सर्वतन्त्रस्वतन्त्र पण्डित श्रीरामयश त्रिपाठी महाशयजीने किया और उसी दिन १६ फरवरीसे ही विराट् सभाओंका कार्यक्रम चल पड़ा। सर्वप्रथम १६ फरवरी तथा १७ फरवरीको नूतन विश्वनाथमन्दिरके प्रांगणमें (मीरघाटपर) सायं ४ बजेसे विराट् सभाएँ हुईं। अनन्तश्रीविभूषित शंकराचार्य, रामानुजाचार्य तथा अनन्तश्रीविभूषित स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज आदि सनातनी जगत्के गण्यमान्य विद्वानों, आचार्यों एवं महात्माओंके अमृतमय उपदेश सुनकर जनता आत्मविभोर हो उठी। सभी आचार्यों एवं विद्वानोंने एक स्वरसे नवीन विश्वनाथ-स्थापनाको सर्वथा उपयुक्त एवं शास्त्रीय बताया और समस्त जनताको बताया कि पुराना विश्वनाथमन्दिर किसी भी दृष्टिमें दर्शन-पूजनयोग्य नहीं रह गया।

अन्तमें मन्त्री विश्वनाथमन्दिर प्रबन्धक समिति श्रीसीतारामजी खेमकाकी ओरसे लगभग ५०० विद्वानोंका सविधि पूजनपूर्वक सत्कार किया गया।

काशीविश्वनाथकी शोभायात्रा एवं समारोह

१९ फरवरी सन् ५८ ई०को श्रीकाशीविश्वनाथकी भव्य ऐतिहासिक शोभायात्रा लगभग २ बजे दिनसे निकाली गयी। शोभायात्रा एवं समारोहमें पधारे हुए ज्योतिष्पीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य श्रीकृष्णबोधाश्रमजी महाराज, द्वारका-शारदापीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य श्रीअभिनव सच्चिदानन्द-तीर्थजी महाराज, काशीपीठाधीश्वर रामानुजाचार्य श्रीदेवनायकाचार्यजी महाराज, महामण्डलेश्वर श्रीस्वामी सदानन्दजी महाराज आदि अनेक आचार्य तथा काशीके विद्वान् और प्रतिष्ठित नागरिक सम्मिलित थे।

शोभायात्रा दशाश्वमेधघाटसे चलकर नगरके प्रमुख पथोंपर होती हुई, ज्ञानवापीके प्रांगणमें विशाल सभाके रूपमें परिवर्तित हो गयी।

शोभायात्रा, जैसा कि उसका नाम है, सत्यत: यथार्थ शोभायात्रा थी। आगे-आगे हाथीपर वेदभगवान् थे। उनके पीछे चार अन्य विशाल गज झूमते

हुए चले जा रहे थे। गजोंके पीछे आचार्य-चरणोंके तीन रथ सुशोभित हो रहे थे। साथमें ही स्वामी सदानन्दजी मण्डलेश्वर गजारूढ़ थे। रथोंके पीछे भजनाश्रम, काशीधामकी मण्डली झांझ, करताल और मृदंगके साथ रसमय भजन गा रही थी। भजनानन्दियोंके पीछे महिला-मण्डलने जुलूसरूपमें शामिल होकर अपनी धर्मनिष्ठाका परिचय दिया। उनके पीछे अन्य आस्तिक जन उल्लासके साथ चले जा रहे थे। दण्डीस्वामियों तथा परमहंस संन्यासियोंकी संख्या भी पर्याप्तमात्रामें भाग ले रही थी। सबसे पीछे एक सुन्दर रथके भीतर विद्यमान दिव्य रजतमय मन्दिरमें श्रीविश्वनाथभगवान् दिव्य मधुवर्णके लिंगरूपमें विराजमान थे। सेवामें श्रीअन्नपूर्णामन्दिरके महन्त श्रीविश्वनाथपुरी बैठे थे। ऐसी ऐतिहासिक शोभायात्राको देखनेके लिये अपार भीड़ उमड़ पड़ी थी। जगह-जगहपर सुमनवृष्टि एवं आरतियाँ भी होती रहीं। इस प्रकार लगभग ६ बजे सायंतक शोभायात्राका कार्यक्रम रहा। इसकी व्यवस्था विशेषरूपसे संस्कृत कालेजके मन्त्री स्वामी धर्मानन्दजी अपने अध्यापकों एवं महात्माओंके साथ कर रहे थे।

अन्तमें ज्ञानवापीपर विराट् सभा हुई। जिसमें भारतके विभिन्न भागोंसे पधारे आचार्य एवं विद्वान् उपस्थित थे। आप सबने भी अपने भाषणमें स्पष्ट कर दिया कि पुराने विश्वनाथमन्दिरमें अब देवत्व नहीं रह गया। अत: कल्याणेच्छुकोंके दर्शन-पूजनके लिये नये मन्दिरमें भगवान् विश्वनाथ प्रतिष्ठित होंगे।

२० फरवरीको टाउनहालके मैदानमें विराट् सभा हुई, जिसमें उक्त सभी आचार्य, श्रीस्वामी करपात्रीजी महाराज, राजकुमारी श्रीमती प्रभावती राजे आदिके जोरदार भाषण हुए। सभी वक्ताओंने शास्त्राज्ञाके अनुसार नये विश्वनाथमन्दिरमें ही दर्शन-पूजन करनेकी व्यवस्थापर जोर दिया।

भगवान् विश्वनाथकी प्राण-प्रतिष्ठा

तिथि फा० शु० ३ संवत् २०१४ विक्रमी दिन शुक्रवार तदनुसार २१ फरवरी सन् १९५८ ई० को अपराह्णमें शास्त्रविधिके अनुसार काशीके प्रसिद्ध वैदिकोंके मनोहर वेदोद्घोषके साथ भगवती भागीरथीके पुनीत तटपर

मीरघाटके ऊपर भारतवर्षके प्रसिद्ध आचार्योंके सांनिध्यमें श्रीकाशीविश्वनाथकी प्राणप्रतिष्ठा हो गयी। प्राणप्रतिष्ठाके समय एक ऐसी अपूर्व शोभा निखर गयी,जिसका वर्णन असम्भव है। उस समय कितने ही विपरीत विचारधारावाले भी आये थे। उन लोगोंको भी हठात् कहना पड़ा कि इस नूतन श्रीविश्वनाथके लिंगमें जिस अभूतपूर्व दिव्य आभाका अनुभव हो रहा है, उसकी कल्पना भी अन्यत्र असम्भव है।

अत्यन्त स्वच्छ संगमरमरके दिव्य चबूतरेपर चाँदीसे मढ़े हुए अर्घेके बीचो-बीचमें स्वर्णके पत्रोंसे मण्डित काले पत्थरकी जलहरीमें वेदोद्घोष एवं धार्मिक जयघोषोंके साथ जिस शुभ समयमें भूतभावन विश्वनाथका मधुवर्णमय लिंग ज्योतिष्पीठ एवं द्वारका-शारदापीठके अधीश्वर दोनों श्रीशंकराचार्य तथा श्रीरामानुजाचार्य देवनायकाचार्य और त्यागमूर्ति श्रीरामयशजी त्रिपाठी (महाशयजी) के करकमलों-द्वारा पधराया जा रहा था, उस समय भूतभावन विश्वनाथके प्रत्यक्ष सांनिध्यका स्पष्ट अनुभव हो रहा था और यह हठात् मानना पड़ा कि विगत कुछ दिनोंसे अवश्य ही काशी अनाथ थी तथा आज पुन: मंगलमय प्रभु विश्वनाथ के दिव्य समागमसे सनाथ हो रही है।

श्रीविश्वनाथजीका भव्य शृंगार एवं राजोपचार-पूजन

प्राणप्रतिष्ठाके अनन्तर राजोपचारसे प्रभु विश्वनाथका मंगलमय पूजन हुआ। दर्शनार्थियोंकी अपार भीड़ उमड़ पड़ी थी। अनन्तश्री स्वामी करपात्रीजी, विद्वानों, पण्डितों और जनता—सभीने नियमानुसार गर्भमन्दिरके बाहरसे भगवान्का दर्शन किया। पूजनके अनन्तर अनन्तश्रीविभूषित श्रीस्वामी करपात्रीजी महाराजका दिव्य अमृतमय उपदेश हुआ, जिसमें महाराजजीने भगवान् विश्वनाथके दर्शन-पूजनका अनुपम महत्त्व बताया।

उस दिन प्राणप्रतिष्ठा-समारोहमें भाग लेनेके लिये कलकत्ता, मुम्बई, दिल्ली आदिसे तथा देशके कोने-कोनेसे भक्तगण विशेष रूपसे पधारे थे।

उसी दिन रात्रिमें भगवान् विश्वनाथका दिव्य शृंगार किया गया। दर्शनार्थियोंने अपार संख्यामें दर्शन किया और यही शृंगारका क्रम एक

सप्ताहतक चलता रहा। इन्हीं दिनों अखण्ड भण्डारा भी चलता रहा, जिसमें दण्डी संन्यासियों, दशनामी परमहंस एवं अन्य सम्प्रदायके साधुओंको भोजन कराया गया और तीर्थपुरोहितों एवं ब्राह्मणोंका भी सत्कार किया गया।

मन्दिरकी स्थायी व्यवस्था

नवीन काशीविश्वनाथ-मन्दिरके संरक्षण, संचालन एवं प्रबन्ध आदिके लिये परम शिवभक्त श्रीसीतारामजी खेमकाको मन्दिरका सचिव एवं प्रबन्धक मनोनीत किया गया। उनकी देखरेखमें मन्दिरकी व्यवस्था सुचारु रूपसे चलने लगी।

इस प्रकरणमें एक विशेष उल्लेखनीय बात है कि वैद्यराज श्रीनन्दकिशोरजी शास्त्री आयुर्वेदाचार्य (काशीके सुप्रसिद्ध विद्वान् पं० श्रीगुरुप्रसादजी शास्त्रीके कनिष्ठ भ्राता) नवमन्दिरमें अवैतनिक प्रधान पुजारीके रूपमें नियुक्त किये गये, जो रात्रिमें तीन बजेकी मंगला आरती, षोडशोपचार-पूजन, अभिषेक एवं सायं प्रदोषकालीन पूजन, अभिषेक, आरती, भगवत्-प्रीत्यर्थ निष्काम भावसे करते रहे।

काशीकी कड़ाकेकी सर्दीमें भी रात्रि २ बजे उठकर गंगास्नान करके मन्दिरमें पूजनके लिये प्रस्तुत हो जाना—यह उनका नित्यका कार्यक्रम था।

काशीविश्वनाथका स्वप्नमें दर्शन

वैद्यजी महाराज पुराने विश्वनाथ मन्दिरमें भी पहले इसी तरह निरन्तर पूजन किया करते थे। अन्त्यज-प्रवेशके बाद उन्होंने भी प्राचीन मन्दिरका त्याग कर दिया, परंतु इष्टदेवके पूजनकी उत्कट उत्कण्ठा निरन्तर बनी रहती थी। बिना पूजा एक दिन भी असह्य हो रहा था। स्वप्नमें भगवान् विश्वनाथने उन्हें दर्शन दिया। एक मधुवर्णका लिंग दिखायी दिया और मानो कोई कहता है कि लो, पूजन करो। कुछ दिनों बाद नये मन्दिरमें भगवान् विश्वनाथकी प्रतिष्ठा हो गयी। मूर्तिका

दर्शन करते ही वैद्यजीको अपना स्वप्न स्मरण हो आया। स्वप्नमें जिस दिव्य लिंगका दर्शन हुआ था, ठीक उसी तरहका यह मधुवर्णका लिंग देखकर वे आह्लादित हो गये और उसी दिनसे उन्होंने नये विश्वनाथमन्दिरमें पूर्ववत् पूजाका कार्यक्रम बना लिया। उनके जीवनका एकमात्र लक्ष्य शिवाराधन ही था। त्याग और तपोमय जीवन बनाये हुए वैद्यजी महाराज काशीके दर्शनीय पुरुषोंमें थे। नियमकी प्रतिबद्धताके कारण उन्हें मन्दिरकी ओरसे मन्दिरके प्रधान पुजारीका पद प्रदान किया गया। इसके अतिरिक्त चार-पाँच सहायक पुजारियोंकी नियुक्ति की गयी, जो भगवान् विश्वनाथकी पूजामें निरन्तर संलग्न रहते।

मन्दिरमें पंचदेवोंकी उपासना

गर्भमन्दिरमें भगवान् विश्वनाथके साथ-साथ गणपति एवं नन्दीश्वरको स्थापित किया गया। इसके साथ ही मन्दिरमें एक ओर एक तरफ लीलापुरुषोत्तम भगवान् श्रीकृष्ण एवं भगवती श्रीराधाका विग्रह दूसरी ओर मर्यादापुरुषोत्तम भगवान् श्रीराम, जगज्जननी श्रीजानकी एवं श्रीलक्ष्मणजी तथा दासरूपमें हनुमान्‌जीका विग्रह स्थापित किया गया। इसके साथ ही मध्यमें भगवती अन्नपूर्णाकी भी स्थापना की गयी। इसके अतिरिक्त पंचदेवोपासनाकी दृष्टिसे भगवान् सूर्यनारायणके विग्रहको स्थापित करनेके लिये स्थान सुरक्षित रखा गया, जिसकी स्थापना उस समय न हो सकनेके कारण उसे भविष्यकी योजनामें सम्मिलित किया गया। मन्दिरके बाहर एक तरफ पृथक् मन्दिरमें सिद्धलक्ष्मीसहित श्रीमहागणपतिकी बृहदाकार मूर्ति स्थापित की गयी, जहाँ प्रतिदिन उसका षोडशोपचार पूजन तथा लावा और दूर्वासे सहस्रार्चन आदि अर्चन-पूजन सम्पन्न किये जाते हैं।

राजभोग एवं भण्डारा

भगवान् विश्वनाथके पूजनमें तथा राजभोगमें गंगाजलका ही प्रयोग करनेका नियम है। भगवान्‌का प्रसाद भी गंगाजलमें निर्मित करनेकी व्यवस्था है। प्रातःकाल एवं सायंकाल राजभोगका प्रसाद आगन्तुक अतिथि,

संत-महात्मा एवं दण्डी संन्यासियोंके अतिरिक्त मन्दिरमें कार्यरत सेवकोंको प्रदान किया जाता रहा। इसके अतिरिक्त समय-समयपर श्रद्धालुजनोंके द्वारा बृहद् भण्डारे का भी आयोजन होता रहता है।

मन्दिरकी स्थापनाके इस ऐतिहासिक शुभ कार्यसे तत्काल सनातन धर्म एवं सनातनियोंकी महत्त्वाकांक्षाएँ तो सुरक्षित रह ही गयीं, साथ ही यदि भूतभावन विश्वनाथकी असीम अनुकम्पा बनी रही तो इस ऐतिहासिक कार्यका वास्तविक मूल्यांकन भविष्यमें होगा; क्योंकि 'वर्तमान' किसी भी कार्यका वास्तविक मूल्यांकन नहीं कर सकता।

स्थापनाके उपरान्त सायंकाल पुनः टाउनहालके मैदानमें विराट् सभा हुई, जिसमें वैद्यराज पं० श्रीसत्यनारायण शास्त्री, श्रीस्वामी करपात्रीजी महाराज और अन्य आचार्यचरणोंके आशीर्वादात्मक प्रवचन हुए।

सभी लोगोंने अपनी मंगलमय शुभ कामनाओंको प्रकट करते हुए एक स्वरसे नवीन विश्वनाथमन्दिरकी स्थापना-जैसे उत्तम कार्यकी भूरि-भूरि सराहना की तथा उस शुभकार्यमें सहयोग करनेवाले लोगोंको साधुवाद समर्पित किया।

'श्रीकाशीविश्वनाथ व्यक्तिगत मन्दिर' नामकरणका कारण

इस मन्दिर का नाम 'श्रीकाशीविश्वनाथ व्यक्तिगत मन्दिर' रखा गया। 'व्यक्तिगत मन्दिर' नाम रखनेका कुछ कारण था। सार्वजनिक मन्दिरका सरकार कभी भी अधिग्रहण कर सकती है और अपने मनमाने तरीकेसे उसे चला सकती है, इसलिये कानूनी सुरक्षाकी दृष्टिसे 'व्यक्तिगत मन्दिर' नाम रखनेकी सावधानी बरती गयी, जिससे भविष्यमें कोई सरकारी हस्तक्षेप न हो सके।

पुराने मन्दिरका स्वर्णशिखर

अहिल्याबाईद्वारा निर्मित काशीविश्वनाथमन्दिरके शिखरपर सन् १८३९ ई० में महाराजा रणजीतसिंहने साढ़े २२ मन सोना चढ़वाया था, जो अबतक विद्यमान है। सन् १९८३ ई० में शिखरपर लगे स्वर्णके कुछ

अंश (लगभग १० कि०ग्रा०) चोरी कर लिये गये, जिसकी जनमानसमें तीव्र प्रतिक्रिया हुई। इसकी छानबीन करनेकी बहुत चेष्टा हुई, परंतु कोई नतीजा नहीं निकला। उन दिनों काशीनरेश डॉ० विभूतिनारायणसिंहने एक पत्रकारवार्ताका आयोजन किया, उन्होंने स्पष्टरूपसे यह घोषणा की कि इस मन्दिरमें शास्त्रमर्यादाका उल्लंघन होनेके कारण यह सब उपद्रव हो रहे हैं, जबसे मन्दिरमें जबरदस्ती अन्त्यजोंका प्रवेश कराया गया, तबसे काशीकी आस्तिक जनता, स्वामी करपात्रीजी तथा यहाँके विद्वद्-गण एवं हमलोग मन्दिर-दर्शनसे वंचित हो गये।

उन्हीं दिनों सरकारने उस मन्दिरका अधिग्रहण कर लिया और वहाँ सरकारी व्यवस्था कर दी गयी, जो अभी भी चल रही है।

जो लोग आस्तिक हैं और शास्त्रकी बातोंको समझते हैं और जिन्हें इस नवीन मन्दिरकी जानकारी है, वे श्रीकाशी-विश्वनाथ व्यक्तिगत मन्दिरमें ही दर्शन- पूजन करते हैं।

मन्दिरमें होनेवाली अर्चा-पूजाका कार्यक्रम

यहाँ मन्दिरमें होनेवाली नित्य अर्चा-पूजाकी विस्तृत जानकारी नीचे लिखी जा रही है—

१-प्रातः ३ बजे मंगला आरती।

२-प्रातः साढ़े ३ बजे षोडशोपचार पूजन एवं अभिषेक।

३-प्रातः ४ बजे प्रातःकालीन आरती।

४-मध्याह्न १० बजे षोडशोपचार पूजन एवं अभिषेक।

५-मध्याह्न ११ बजे राजभोग एवं आरती।

६-सायं ६ बजे प्रदोषकालीन षोडशोपचार पूजन एवं अभिषेक।

७-रात्रि ७ बजे शृंगार आरती।

८-रात्रि ९ बजे राजभोग आरती।

९-रात्रि १० बजे शयन आरती।

इसके अतिरिक्त निरन्तर कथावार्ता चलती रहती है और विशिष्ट विद्वानोंद्वारा धर्मोपदेश भी समय-समयपर दिया जाता है, जिससे श्रद्धालुजन लाभ उठाते हैं।

बाहरसे पूजनकी व्यवस्था

इसके साथ यह भी व्यवस्था बनायी गयी कि जो व्यक्ति भगवान् विश्वनाथपर जल चढ़ाना चाहे, उनके बोल देनेपर पुजारीद्वारा भीतर विश्वेश्वरलिंगपर उनकी ओरसे जल चढ़ा दिया जाता है। इसके बदले वे चाहें तो बाहर लगे दानपात्रमें कुछ मुद्रा छोड़ सकते हैं। इसके साथ ही पुष्प, बिल्व-पत्र इत्यादि भी चढ़ानेकी व्यवस्था है।

इसके अतिरिक्त किसी व्यक्तिको भगवान् विश्वनाथका पूजन तथा अभिषेक आदि कराना है तो कार्यालयसे रसीद कटानेपर मन्दिरके भीतर पुजारीद्वारा यह कार्य सम्पन्न किया जाता है। भगवान् विश्वनाथके ऊपर दुग्धधारा, जलधारा तथा पुष्प-शृंगार आदिकी सेवा भी व्यक्तिगतरूपसे कार्यालयमें रसीद कटाकर करायी जा सकती है।

श्रद्धालुजनोंके लिये मन्दिरमें पूजा-अर्चा एवं अनुष्ठानकी विशेष व्यवस्था

स्वयं तथा विद्वान् पण्डितोंद्वारा पूजन करने एवं करानेकी व्यवस्था

गर्भमन्दिरके भीतर भगवान् विश्वनाथकी नियमित पूजा-अर्चा, अभिषेक एवं आरती आदि सेवाके अतिरिक्त बाहर भी जो भक्त स्वयं पूजा, अभिषेक आदि करना चाहें तो इसकी भी व्यवस्था है। मन्दिरके भीतर बाणलिंग, नर्मदेश्वर एवं स्फटिक शिवलिंग आदि चल मूर्तिका पूजन प्रतिदिन होता है, जिसे बाहर मन्दिर-प्रांगणमें बैठकर भक्तोंके द्वारा पूजन-अभिषेक आदिके लिये प्रस्तुत करनेकी व्यवस्था है।

वर्तमानमें मन्दिरकी तरफसे अनुष्ठान, पूजन, अभिषेक एवं पाठ आदिकी निम्नलिखित व्यवस्था बनायी गयी है—

(१) **गर्भमन्दिरसे प्राप्त लिंगका पूजन**—गर्भमन्दिरसे प्राप्त शिवलिंगका षोडशोपचार-पूजनके साथ रुद्राष्टाध्यायीसे षडङ्ग रुद्राभिषेक अथवा एकादशनी

रुद्राभिषेक स्वयं करे अथवा पण्डितसे कराये।

यह अभिषेक एक पण्डितद्वारा किसी एक दिनमें भी कराया जा सकता है तथा ११ दिन करानेमें ११ अभिषेक हो जाते हैं, इसे लघुरुद्र कहा जाता है। यह लघुरुद्र ११ पण्डितोंद्वारा एक दिनमें भी सम्पन्न कराया जाता है, इसमें एक आचार्य अतिरिक्त रखे जाते हैं, जो यह कार्य सम्पन्न कराते हैं। एक पण्डितद्वारा १२१ दिनोंतक रुद्राभिषेक होनेपर उसे महारुद्राभिषेककी संज्ञा दी जाती है। कुछ लोग एक साथ १२१ रुद्राभिषेक भी कराते हैं।

(२) **लघुरुद्र**—११ पण्डितोंद्वारा एकादश शिवलिंगोंका षोडशोपचार पूजन एवं रुद्राभिषेक यजमान अपनी सन्निधिमें भी करा सकते हैं। यह अभिषेक कुशोदकसे, गंगाजलसे, दूधसे अथवा गन्ने आदिके रससे भी कराया जा सकता है। इसमें लगभग ३ से ४ घण्टेका समय लगता है। पूजन-सामग्री तथा पण्डित आदिकी व्यवस्था मन्दिर-कार्यालयके द्वारा की जाती है। यजमानको केवल खर्चेकी रसीद कटानी पड़ती है। पूजन एवं अभिषेकमें वे स्वयं भी शामिल हो सकते हैं।

(३) **महारुद्राभिषेक**—इसमें पूजन तथा अभिषेक विद्वान् आचार्यके संरक्षणमें एक स्थानपर यजमानद्वारा सम्पन्न किया जाता है तथा १२१ पण्डितोंके द्वारा रुद्राष्टाध्यायी—एकादशिनी रुद्रीका पाठ होता है।

(४) **सहस्रार्चन**—यजमानके इच्छानुसार भगवान्के पूजनमें कमलपुष्प एवं बिल्वपत्रसे मन्त्रोंद्वारा सहस्रार्चन भी करनेकी व्यवस्था है।

(५) **जप-अनुष्ठान**—जो लोग किसी प्रकारका अनुष्ठान सोद्देश्य अथवा भगवत्-प्रीत्यर्थ कराना चाहते हैं, उनके लिये आगे दिये हुए अनुष्ठान मन्दिरकी व्यवस्थामें कराये जा सकते हैं—यजमानको अपना नाम, गोत्र तथा उद्देश्य लिखाना पड़ता है। उनके गोत्र तथा नामसे संकल्प कराकर अनुष्ठान विधिपूर्वक सम्पन्न कराया जाता है।

मन्दिरके नियमानुसार अनुष्ठानी पण्डितको ३ से ४ घंटेका समय अनुष्ठानमें देना पड़ता है। उनकी दक्षिणा योग्यता एवं समयानुसार निर्धारित

रहती है। अनुष्ठानके समय पण्डितोंको मौन रहकर जप एवं पाठ करनेका नियम है। अनुष्ठानकालमें धोतीके अतिरिक्त गमछा, चद्दर, स्वेटर आदि पण्डितको धारण करनेका नियम विधिके अनुसार है। अर्थात् गंजी, कमीज आदि सूती ऊर्ध्व वस्त्र नहीं पहन सकते।

(क) **महामृत्युंजय जप**—संख्या निर्धारितकर पण्डितोंद्वारा जप सम्पन्न कराया जाता है।

(ख) **विभिन्न ग्रहोंके जप एवं ग्रहशान्ति**—जन्मकुण्डलीके अनुसार ज्योतिषियोंके निर्देशानुसार विभिन्न ग्रहोंके जप उनकी निर्धारित संख्याके अनुसार सम्पन्न कराये जाते हैं। पूर्ण होनेपर आवश्यकतानुसार इनके दशांश हवन आदि भी पूर्णाहुतिमें कराये जाते हैं।

(६) **सम्पुटसहित दुर्गासप्तशतीपाठ**—विभिन्न उद्देश्योंकी पूर्तिके लिये अथवा भगवती-प्रीत्यर्थ विभिन्न सम्पुटके साथ विधिपूर्वक दुर्गापाठ कराया जाता है। प्रायः १०० पाठ अथवा दशांश हवनके बदले १२१ पाठ कुछ लोग कराते हैं। पूर्णाहुतिमें दशांश हवन तथा ब्राह्मणभोजन, भण्डारा इत्यादि करानेकी भी विधि है।

(७) **श्रीमद्भागवत-पाठ**—कुछ श्रद्धालुगण भागवत-सप्ताहपारायणका पाठ कराना चाहते हैं। विधिपूर्वक पाठ करानेकी व्यवस्था मन्दिरकी तरफसे रहती है।

(८) **रामायण एवं विभिन्न पुराणोंका पारायण**—श्रीरामचरितमानस अथवा वाल्मीकीय रामायण, अध्यात्म-रामायण तथा शिवपुराण एवं श्रीदेवीभागवत आदि अन्य पुराणोंका पारायण, पाठ अथवा कथा आदि कोई कराना चाहे तो मन्दिरकी ओरसे इसकी व्यवस्था भी रहती है।

(९) **विशेष अनुष्ठान**—विशेष परिस्थितिमें कुछ लोग शतचण्डी, महारुद्राभिषेक, महामृत्युंजय जप आदिका अनुष्ठान अधिक पण्डितोंको रखकर ७ दिनमें, ९ दिनमें अथवा ११ दिनमें सम्पन्न करना चाहते हैं। यह विशेष अनुष्ठान विद्वान् पण्डितके आचार्यत्वमें सम्पन्न कराया जाता है। इसमें पंचांग-पूजन, पण्डितोंका वरण तथा नान्दीमुख श्राद्ध आदि सम्पन्न

किये जाते हैं। यजमान उपलब्ध रहनेपर स्वयं करते हैं अथवा उनके प्रतिनिधिरूपमें पण्डितद्वारा सब कार्य सम्पन्न कराया जाता है। पण्डितगण प्रातः ८ बजेसे सायं ६ बजेतक अनुष्ठानमें संलग्न रहते हैं। मध्यमें उन्हें फलाहार करानेकी व्यवस्था रहती है। १२ बजेतक तथा १२ से २ के बीच फलाहार एवं विश्रामके अनन्तर २ से ६ बजेतक अनुष्ठान-कार्यमें संलग्न रहते हैं। अन्तिम दिन पूर्णाहुतिमें दशांश हवन, तर्पण, मार्जन तथा ब्राह्मणभोजन आदिका कार्य सम्पन्न होता है।

(१०) **गोदान**—जो लोग गोदान करना चाहते हैं, उनके लिये भी मन्दिरमें व्यवस्था रहती है। भारतीय मूलकी देशी गाय खरीदकर मँगायी जाती है। गऊके साथ सोनेकी सींग, चाँदीका खुर, मोतीकी पूँछ, ताम्रपीठ, वस्त्र, नाँद, बाल्टी, कटोरा तथा भोजन-सामग्री आदिकी व्यवस्था मन्दिरकी तरफसे कर दी जाती है। गऊ लेनेवाले पण्डित जो गोपालन एवं गोसेवा करते हैं तथा गायका विक्रय नहीं करते—ऐसे पण्डितोंकी सूची मन्दिरमें रहती है, उन्हें आवश्यकतानुसार गऊ दिलायी जाती है। यजमानकी श्रद्धानुसार एक वर्षका भोजन-निष्क्रयका संकल्प कराकर मन्दिरमें जमा करा दिया जाता है। जिसे प्रतिमास गोगृहीता पण्डितको गायके भोजनके निमित्त मन्दिरसे प्राप्त होता रहता है।

श्रद्धालुजनोंकी सुविधाके लिये मन्दिरमें अनुष्ठान तथा गोदान आदिकी सब व्यवस्था स्वाभाविक रूपसे रहती है। केवल यजमानके इच्छानुसार आदेशपर सब कार्य स्वतः सम्पन्न करा दिया जाता है। इन सब कार्योंको सम्पन्न करनेके लिये मैनेजर तथा मुनीम मन्दिरके कार्यालयमें उपलब्ध रहते हैं। लगभग ५०-६० पण्डित प्रतिदिन प्रातः एवं सायंकाल मन्दिरमें अनुष्ठान-कार्यमें संलग्न रहते हैं।

सिद्धपीठमें अर्चा-पूजा एवं अनुष्ठानकी सफलता

'धर्म' शब्दकी व्याख्या करते हुए आचार्योंने लिखा है—'**यतोऽभ्युदय-निःश्रेयससिद्धिः स धर्मः**' जिससे इस लोक तथा परलोक दोनोंमें कल्याण हो, वह धर्म है।

वेदशास्त्रोंमें इस लोकमें कामनासिद्धिके अनेक उपाय बताये गये हैं, जिनका विधिवत् अनुष्ठान करनेसे निश्चित ही मनुष्य अपने मनोरथोंकी सिद्धि प्राप्त कर लेता है। वर्तमानमें इसका प्रत्यक्ष उदाहरण नया काशीविश्वनाथमन्दिर हो गया है। बाहरके लोगोंकी सुविधाके लिये यह व्यवस्था है कि नाम, गोत्र एवं उद्देश्य लिखा देनेपर यहाँ अनुष्ठान-कार्य सम्पन्न करा दिया जाता है। इनमें कई प्रमाण ऐसे मिले हैं कि असम्भव लगनेवाले कार्य भी सम्भव हो गये। यह भगवान् विश्वनाथकी कृपा है और उनकी प्रत्यक्ष सकलाई है।

मन्दिरमें सम्पन्न होनेवाले विभिन्न पर्वोंके समारोह

महाशिवरात्रिपर्व

महाशिवरात्रि भगवान् विश्वनाथका विशेष प्रिय पर्व है। इस दिन शिवशक्तिसंगम होता है। शास्त्रोंके अनुसार इस पर्वपर भगवान् शिवकी आराधना करनेसे सम्पूर्ण मनोरथ सिद्ध होते हैं। मन्दिरमें एक दिनके अनुष्ठानसे ही लोगोंको बहुत-कुछ लाभ होता है।

महाशिवरात्रिपर्वपर प्रायः प्रतिवर्ष अखण्ड रुद्राभिषेकका पारायण २४ घंटे चलता है। इसके अतिरिक्त विभिन्न श्रद्धालुजनोंके द्वारा मन्दिरके प्रांगणमें रुद्राभिषेक, लघुरुद्र, महारुद्राभिषेक आदि कार्यक्रम प्रातःसे लेकर रात्रिपर्यन्त अनवरत रूपसे चलते रहते हैं। गर्भमन्दिरमें काशीके कम-से-कम ११ विशिष्ट वैदिक विद्वानोंके द्वारा भगवान् विश्वनाथका सम्पूर्ण रात्रिमें

४ बार राजोपचार-पूजन, रुद्राभिषेक, शृंगार तथा आरती सम्पन्न होता है। रात्रिभर मन्दिरमें विशेष आभा प्रस्फुटित होती रहती है। बहुत सारे श्रद्धालुजन भजन-कीर्तन करते हुए जागरण करते हैं। इस प्रकार महाशिवरात्रिकी अद्भुत दिव्य छटा छायी रहती है।

रामनवमी-उत्सव

चैत्र शुक्ल नवमीको भगवान् श्रीरामका जन्म-महोत्सव मनाया जाता है। भगवान्‌के पूजनोपरान्त दिनमें १२ बजे बड़ी आरती होती है। तदनन्तर पँजीरी, पंचामृत एवं फलका प्रसाद-वितरण होता है।

गुरुपूर्णिमा-महोत्सव

भगवान् विश्वनाथको जगद्‌गुरुरूपमें मानकर पूजा, आरती एवं प्रसाद-वितरण किया जाता है।

श्रावणके सोमवार

श्रावणका महीना भगवान् शंकरका मुख्य मास है। इस महीनेमें एक मासतक भगवान् विश्वनाथकी विशेष आराधना, पूजन, अभिषेकका विधान है। विशेषकर श्रावणके सोमवारको सोमप्रदोषकी संज्ञा दी गयी है। इस दिन प्रातः-कालसे लेकर सायंकालतक अभिषेक, पूजनका क्रम अनवरत रूपसे चलता है।

श्रावणीपूजन

श्रावण शुक्ल पूर्णिमाको प्रातःकाल श्रावणीपूजनका कार्यक्रम होता है। वेदविद्यालयके छात्र, अध्यापक तथा अन्य श्रद्धालुजन सर्वप्रथम गंगाघाटपर सर्वविध-प्रायश्चित्तका संकल्प करते हैं। तदनन्तर दशविध-प्रायश्चित्त-स्नान होता है। इसके बाद मन्दिरमें आकर सभी लोग उपस्थान, षोडशोपचार-ऋषिपूजन आदि कार्यक्रम सम्पन्न करते हैं। यज्ञोपवीती लोगोंके लिये यह विशेष महत्त्वका दिन माना जाता है।

जन्माष्टमी-महोत्सव

भाद्रपद कृष्ण अष्टमीको रात्रिमें १२ बजे कृष्णजन्मोत्सव मनाया जाता है। लीलापुरुषोत्तम भगवान् श्रीकृष्णका पूजन, आरती एवं प्रसाद-वितरण होता है।

कुशोत्पाटिनी-अमावस्या

भाद्र कृष्ण अमावस्याको विश्वनाथजीके पुजारीगण विधिपूर्वक कुश उखाड़कर लाते हैं, पूजन आदि कार्यक्रमोंमें इन कुशाओंका वर्षभर उपयोग किया जाता है।

गणेशचतुर्थी

भाद्र शुक्ल चतुर्थीको विघ्नविनायक गणेशका उत्सव मनानेकी परम्परा है। इस दिन गणेशजीका षोडशोपचारपूजन तथा लावा, दूर्वा और मोदक, लड्डूसे सहस्रार्चन किया जाता है। इसके अनन्तर मोदक, लड्डूका प्रसाद भक्तोंमें वितरण होता है।

अन्नकूट-समारोह

दीपावलीके दूसरे दिन अन्नकूट-महोत्सव मनानेकी परम्परा है। विभिन्न प्रकारके पकवान प्रचुर मात्रामें पहले दिन रात्रिमें भगवान् विश्वनाथकी सन्निधिमें लगा दिये जाते हैं, जिनका दर्शन दूसरे दिन रात्रितक भक्तोंको होता है। इसके बाद प्रसादका वितरण भक्तोंमें किया जाता है।

इसके साथ ही कच्चा प्रसाद (चावल, कढ़ी, सब्जी, हलुआ तथा पूड़ी आदि)-का भोग भी अन्नकूटके दिन दोपहरमें लगता है तथा उसी समय दर्शनार्थियोंको पर्याप्त मात्रामें वितरित किया जाता है, जिसे लोग प्रायः वहीं पा लेते हैं।

विवाह-पंचमी

मार्गशीर्ष शुक्ल पंचमीको भगवान् श्रीसीतारामजीके विवाहका महोत्सव मनाया जाता है, जिसमें विशेषरूपसे मोतीचूरके लड्डुओंका भोग लगता है, जिसका प्रसादरूपमें दर्शनार्थियोंमें वितरण किया जाता है।

रंगभरी एकादशी

फाल्गुन शुक्ल एकादशीको होलीके रंगके महोत्सवका प्रारम्भ भगवान् विश्वनाथके चरणोंमें अबीर-गुलाल आदि रंगोंको अर्पितकर किया जाता है। इस दिन भगवान् शंकर-पार्वतीके विग्रहका दर्शन मूर्तिरूपमें होता है। इस दिन

भगवान् विश्वनाथको ठण्डईका भोग भी लगता है, जिसे दर्शनार्थियोंको प्रसादरूपमें वितरित किया जाता है।

वर्तमान समयमें राजभोग एवं भण्डारा

आजकल मन्दिरमें भण्डारेका कार्यक्रम बृहद् रूपमें चलता है। दिनमें ११ बजेकी आरतीके अनन्तर जो भी बाहरके यात्री साधु-सन्त, महात्मा बिना निमन्त्रणके पधार जाते हैं, उन सभीको प्रसाद-भोजन करानेकी व्यवस्था रहती है। लगभग दो-ढाई सौ व्यक्तियोंको भोजन प्रतिदिन नि:शुल्क होता है। इनमें अभावग्रस्त दरिद्रनारायण आदि भी सम्मिलित होते हैं।

राजभोगका प्रसाद विशेष पवित्रतासे अलग लकड़ीके चूल्हेपर बनाया जाता है तथा भगवान्‌का भोग लगनेके बाद ही भण्डारेका कार्यक्रम सम्पन्न होता है।

प्राय: प्रतिदिन चावल-दाल-रोटी-सब्जी तथा कुछ मीठे आदिका प्रसाद बनता है। किसी भक्तद्वारा विशेष भण्डारा करानेपर अन्य पक्वान्नसे युक्त प्रसाद निर्मितकर भोग लगता है।

मन्दिरसे सम्बद्ध संस्थाएँ

वेदविद्यालय

श्रीकाशीविश्वनाथमन्दिरके तत्त्वावधानमें संवत् २०५८ वि० में वेदविद्यालयकी स्थापना की गयी, जिसमें ८ वर्षसे १२ वर्षकी अवस्थाके छात्रोंको यज्ञोपवीत-संस्कार कराकर ब्रह्मचारीके रूपमें रखा जाता है। वे शास्त्रोंकी विधिसे ब्रह्मचर्यके नियमोंका पालन करते हुए त्रिकाल सन्ध्या और नित्यप्रति दोनों समय हवन करते हैं। वेदाध्ययनमें यजुर्वेदकी पूरी संहिता उन्हें सस्वर कण्ठस्थ करायी जाती है, इसके साथ ही सम्पूर्ण लघुसिद्धान्तकौमुदी पढ़ायी जाती है, जिससे उन्हें व्याकरणका ज्ञान हो जाय। संस्कृत-साहित्य और संस्कृतमें अनुवाद एवं वार्तालापका अभ्यास

कराया जाता है। ज्योतिषशास्त्रका सामान्य ज्ञान एवं आधुनिक विषयोंमें हिन्दी, अंग्रेजी आदि पढ़ाये जाते हैं। कम्प्यूटरका भी ज्ञान करानेकी व्यवस्था है।

इसके साथ ही इन्हें कर्मकाण्डकी शिक्षा भी दी जाती है। प्रतिपदा एवं अष्टमी अवकाशके दिन वेदी-निर्माण, पंचांगपूजन एवं अभिषेक आदि कार्य छात्रोंद्वारा सम्पन्न कराये जाते हैं, जिससे उन्हें पूजन एवं कर्मकाण्डकी व्यावहारिक शिक्षा प्राप्त होती है।

इनका पाठ्यक्रम छ: वर्षका निर्धारित है। अत: सभी छात्र छ: वर्षके लिये आवासीय व्यवस्थामें रखे जाते हैं, जिसमें प्रात: ४ बजेसे रात्रि ७ बजे तकका कार्यक्रम निर्धारित रहता है।

वर्तमान समयमें विद्यालयमें लगभग ४० छात्र अध्ययनरत हैं। आगे छात्रोंकी संख्या बढ़ानेकी भी योजना है। प्रतिवर्ष प्राय: १० नये छात्रोंका प्रवेश कराया जाता है। लिखित परीक्षा एवं साक्षात्कारमें उत्कृष्ट छात्रोंका चयनकर उन्हें विद्यालयमें प्रवेश दिया जाता है। वर्षमें उन्हें गर्मियोंमें एक मासका अवकाश दिया जाता है, बीचमें किसी प्रकारका अवकाश ब्रह्मचारियोंको नहीं दिया जाता। इनके भोजन, जलपान, वस्त्र एवं चिकित्सा इत्यादिकी व्यवस्था प्राय: विद्यालयकी रहती है। छ: वर्षकी अवधि पूर्ण होनेपर पाठ्यक्रमकी समाप्तिके अनन्तर ब्रह्मचारियोंका समावर्तनकर दीक्षान्त-समारोहमें विद्यालयकी ओरसे प्रमाणपत्र प्रदानकर उनकी विदाई की जाती है।

वेदविद्यालयके निमित्त भवनका विस्तार भी किया जा रहा है, जिसके लिये भक्तोंद्वारा आर्थिक सहयोग भी प्राप्त होता है।

विश्वनाथजीकी गोशाला

वाराणसीके महमूरगंज क्षेत्रमें विश्वनाथजीका एक बगीचा है, जिसमें विश्वनाथजीकी गोशालाका प्रावधान है। यद्यपि यह कार्य अभी पूर्णरूपसे पूरा नहीं हुआ है। निकट भविष्यमें भगवत्-कृपासे यथाशीघ्र इसके पूर्ण होनेकी आशा है। इस गोशालामें भारतीय मूलकी देशी गायोंकी सेवा-सुश्रूषा

करनेकी व्यवस्था रहेगी। इनसे जो दूधका उत्पादन होगा, उसका उपयोग भगवान् विश्वनाथकी पूजा, अभिषेक, भोग-राग, साधु-सन्त एवं असहाय लोगोंके लिये करनेकी व्यवस्था है।

सत्संग-भवन एवं यज्ञशाला

श्रीविश्वनाथमन्दिरके समक्ष गंगाके पवित्र तटपर एक विशाल सत्संग-भवन भी बना है, जहाँ समय-समयपर सत्संग-सभा, लीला-कीर्तन, प्रवचन एवं विशेष अनुष्ठान आदिके कार्यक्रम आयोजित होते रहते हैं। इसके साथ ही एक छोटी यज्ञशाला भी बनी है, जहाँ अनुष्ठानोंकी पूर्णाहुति, हवन तथा यज्ञादिके कार्यक्रम होते हैं।

अतिथिगृह

मन्दिरके आदिप्रबन्धक एवं सचिव श्रीसीतारामजी खेमकाकी स्मृतिमें श्रीसीतारामसेवाट्रस्टद्वारा निर्मित अतिथि-भवन मन्दिरके ठीक बगलमें स्थित है। यह भवन भगवान् विश्वनाथ एवं उनके भक्तोंके लिये समर्पित है। इसमें बाहरसे आनेवाले विश्वनाथजीके भक्त, सन्त-महात्मा एवं अतिथियोंके लिये आवास एवं प्रसाद-भोजनकी व्यवस्था है। इसके साथ ही साधन-भजन-कीर्तन एवं विशेष अनुष्ठान के निमित्त भी स्थान उपलब्ध कराया जा सकता है।

वेद-शास्त्रानुसन्धान-केन्द्र

वेद-शास्त्रोंकी सुरक्षा, विकास एवं अनुसन्धान-कार्योंके निमित्त एक कक्ष उपर्युक्त भवनमें सुनिश्चित है, जहाँ अनन्त श्रीस्वामी करपात्रीजी तथा अन्य विद्वानोंद्वारा लिखित वेद-शास्त्रोंकी विभिन्न पुस्तकें एवं अन्य धार्मिक पुस्तकें उपलब्ध हैं तथा यहाँसे अनुसन्धान-कार्य और पुस्तकोंका प्रकाशन एवं वितरण करनेकी भी व्यवस्था है।

मन्दिरकी स्थापनाके अवसरपर अनन्तश्री स्वामी करपात्रीजी महाराजका वक्तव्य

[नये विश्वनाथमन्दिरकी स्थापनाके शुभ अवसरपर अनन्तश्रीस्वामी करपात्रीजी महाराजने एक समन्वयात्मक वक्तव्य प्रसारित किया, जिसे यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है—]

काशीके पण्डितोंने जो संकल्प किया था, भगवान् विश्वनाथकी कृपासे वह पूरा हो गया। नये मन्दिरका शिलान्यास हो गया और सम्प्रति संगमरमरकी एक वेदिकापर शास्त्रीय विधि-विधानपूर्वक श्रीकाशीविश्वनाथकी स्थापना हो गयी। एक सप्ताहतक यह समारोह चलता रहा। श्रीजगद्गुरु शंकराचार्य श्रीशारदापीठाधीश्वर, जगद्गुरु शंकराचार्य श्रीज्योतिष्पीठाधीश्वर, जगद्गुरु रामानुजाचार्य श्रीदेवनायकाचार्य, महामण्डलेश्वर श्रीस्वामी सदानन्दजी तथा अन्य कई आचार्य एवं दण्डी संन्यासी, साधु-सन्त इसमें सम्मिलित हुए। काशीके प्रायः सभी वैदिक एवं दो-चारको छोड़कर सभी पण्डितोंने इसमें सक्रिय भाग लिया। 'शोभायात्रा' में, सभाओं एवं दर्शन करनेमें अपार भीड़ देखी गयी। इस तरह यह स्पष्ट हो जाता है कि इसमें धर्माचार्य, विद्वान् एवं जनता सभीका समर्थन प्राप्त है, पर खेद है कि तब भी कुछ लोग किन्हीं कारणोंसे इसे विवादका प्रश्न बनाये हुए हैं। अतः स्थितिको एक बार पुनः स्पष्ट कर देनेकी आवश्यकता है।

सनातन धर्मकी दृष्टिसे सभी प्राणी भगवान्‌की सन्तान हैं, सभी भगवान्‌के अंश हैं। अन्ततः सभी भगवान्‌के स्वरूप हैं, सबका ही कल्याण भगवान्‌को अभीष्ट है। फिर भी जैसे योग्यता और परिस्थितिके अनुसार रोगियोंके लिये पृथक्-पृथक् औषधकी व्यवस्था की जाती है, वैसे ही अधिकारानुसार धर्माधर्मकी व्यवस्था की जाती है। इसीलिये **'परमार्थतः अमृतस्य पुत्राः'** के अनुसार भगवत्संतान होते हुए भी व्यवहारमें संविधानके अनुसार ही सबको बर्ताव करना पड़ता है।

'मानव-मानव एकसमान' की बात भी इसी अंशमें सही है कि सबके लिये रोटी, कपड़ा, इलाज, निवास-स्थान, शिक्षा आदिकी यथायोग्य व्यवस्था होनी चाहिये। 'मानव-मानव एकसमान' के नामपर लौकिक सरकारी अधिकारानधिकारका विचार टाला नहीं जा सकता, तो फिर शास्त्रीय अधिकारानधिकारका विचार कथमपि त्याज्य नहीं हो सकता। जैसे 'औरत-औरत एकसमान' इस नारेके आधारपर माँ, बहन, बेटी एवं पत्नीका भेद-व्यवहार उपेक्षणीय नहीं हो सकता, वैसे ही 'औषध-औषध एकसमान' कहना भी मूर्खता है। शास्त्रोंके अनुसार अपने-अपने अधिकारानुसार धर्माचरण ही कल्याणकारी होता है—

स्वे स्वेऽधिकारे या निष्ठा स गुणः परिकीर्तितः।
विपरीतस्तु दोषः स्यादुभयोरेष निश्चयः॥

यह कहा जा चुका है कि 'ब्राह्मण राजसूय, क्षत्रिय वाजपेय नहीं कर सकता। एक सर्वशास्त्रविद् श्रोत्रिय ब्राह्मणकी माता ब्राह्मणीके लिये शालग्रामका स्पर्श निषिद्ध है, यद्यपि वह महाविद्वान् अपनी माताको अन्नपूर्णाकी तरह पूजता है।'

शास्त्रीय विषयोंमें शास्त्रानुसार ही व्यवस्था होती है। तुलसी विष्णुपर चढ़ाना पुण्य है और गणेशपर चढ़ाना पाप है। अक्षत शिवपर चढ़ाना पुण्य है और विष्णुपर चढ़ाना पाप है। गोमूत्र शुद्ध है, अन्य मूत्र अशुद्ध। शंखकी अस्थि शुद्ध है, मनुष्यकी अस्थि अशुद्ध, व्याघ्र-चर्म शुद्ध है और गर्दभ-चर्म अशुद्ध।

ठीक इसी तरह ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, अन्त्यज तथा अन्य मानवमात्र अपने-अपने धर्मपर चलकर कल्याणके भागी हो सकते हैं। मुसलमानको कुरान और हदीसके अनुसार, ईसाईको 'बाइबिल' के अनुसार, पारसीको 'जेन्दावेस्ता' के अनुसार चलना पड़ता है। हिन्दुओंको भी हिन्दूशास्त्रानुसार चलना पड़ता है तथा मूर्तिपूजक बननेपर मूर्तिपूजा-विधायक शास्त्रोंके अनुसार सब व्यवस्था माननी पड़ती है। तदनुसार अन्त्यज आदिको मन्दिर-प्राकारके बाहरसे ही दर्शन करना चाहिये।

भगवन्नाम-कीर्तन, भगवद्भक्ति, भगवत्तत्त्व-विज्ञान, अहिंसा, दया आदि धर्मका पालन करनेसे अन्त्यजकी पूर्णरूपसे सद्गति हो जाती है। एक स्वधर्मविमुख ब्राह्मण नरकगामी हो सकता है, किंतु एक स्वधर्मनिष्ठ भगवद्भक्त अन्त्यज वैकुण्ठका भागी हो सकता है। शास्त्रज्ञोंकी व्यवस्थाके अनुसार तथा आजके कानूनके अनुसार हम सबके लिये यही व्यवस्था ठीक है कि 'ब्राह्मण' आदि वहींसे दर्शन करें, जहाँसे अन्त्यजोंके लिये दर्शनकी व्यवस्था हो। मन्दिरमें केवल पूजाचार्य ही जायँ। इस तरह अन्त्यजोंको भगवान्‌का दर्शन भी हो जाता है, उन्हें बराबरीका अनुभव भी हो जाता है और मन्दिरकी मर्यादा भी सुरक्षित रह जाती है। इतनेपर भी जो लोग 'मानव-मानव एकसमान' का नारा लगाकर अन्त्यज-मन्दिर-प्रवेश कराकर मन्दिरकी मर्यादा तोड़ते हैं, वे वस्तुतः शास्त्रके एवं धर्मके द्रोही ही हैं। फिर क्या उनसे यह नहीं कहा जा सकता है कि 'जब मानव-मानव एकसमान' तो पत्थर-पत्थर एकसमान क्यों नहीं? यदि है तो अपने पाखानेके पत्थरपर सिर क्यों नहीं पटकते? किसी मन्दिरकी मूर्तिसे क्या सरोकार?

जो जड़वादी हैं, नास्तिक हैं, शास्त्र-धर्म कुछ भी नहीं मानते, उनसे इस सम्बन्धमें कोई विवाद नहीं है। किंतु उन अधकचरे लोगोंकी विचित्र स्थिति है, जो ईश्वर मानना भी नहीं छोड़ सकते और पाषाणादि मूर्तियोंकी पूजा भी करना चाहते हैं, साथ ही उनके आधारभूत शास्त्रोंको माननेमें भी वे असमर्थ हैं। उनकी अपनी मनमानीमें शास्त्र बाधा डालते हैं। यह स्पष्ट है कि जो शास्त्रप्रमाण मानते हैं, उन्हींके लिये मूर्तिमें देवत्व तथा मूर्तिपूजामें विश्वास सम्भव है। जो शास्त्रोंको प्रमाण नहीं मानते, उनके लिये अजायबघरकी मूर्तिमें, बाजारमें बिकनेवाली मूर्तिमें तथा अशुचिस्थलस्थित (शौचालयके) पाषाणमें कोई भी अन्तर सिद्ध नहीं होता। ये बातें सूर्य जैसी स्पष्ट हैं। यह अर्धकुक्कुटी या अर्धजरतीय न्याय कहलाता है कि किसी चीजका आधा माना जाय

और आधा छोड़ दिया जाय। शास्त्रोक्त देवप्राणप्रतिष्ठा, मूर्तिपूजा मानना किंतु उनके नियमों, विधानोंको न मानना, एक अंशको सही कहना, दूसरे अंशको रूढ़िवाद कहना क्या संगत है? यदि नियमकी बातें रूढ़िवाद हैं तो मूर्तिपूजा भी रूढ़िवाद क्यों नहीं? यदि ब्राह्मण-अन्त्यजमें कोई अन्तर नहीं है तो बाजारकी मूर्ति और मन्दिरकी मूर्तिमें ही क्या अन्तर है? समानताकी चिल्लाहट मचानेवाले क्या माता, पुत्री, भगिनी, पत्नीमें सब अंशोंमें समानताका व्यवहार करते हैं? अतः समानताकी एक सीमा होती है। ठीक इसी तरह शास्त्रीय व्यवहारोंमें शास्त्रानुसार ही व्यवहार होता है। मनमानी समानताकी बात वहाँ नहीं चल सकती।

आज मुसलमान, ईसाई आदि अपने धर्मग्रन्थोंका आदर करते हैं, हतभाग्य हिन्दू ही समानता या सुधारके नामपर अपने नियमों, शास्त्रों, धर्मों, मर्यादाओंकी स्वयं हत्या करनेपर उतारू है तथा प्रत्यक्ष विचार करनेके समय सामने नहीं आते। वस्तुतः धर्माधर्मके सम्बन्धमें किसीके फितूर प्रमाण नहीं हो सकते। शास्त्रके आधारपर ही धर्माधर्मका विचार चल सकता है। अतः शास्त्रानुसार ही ब्राह्मण-अन्त्यज तथा पत्नी-पुत्री आदिका भेद सिद्ध होता है। तदनुसार ही देवमूर्ति एवं अन्य पाषाणोंका भेद सिद्ध होता है। साधारण कागज और नोटके कागजमें तभीतक भेद रहता है, जबतक संविधानके अनुसार उसकी मान्यता होती है। संविधानकी मान्यता समाप्त होते ही कागज-कागज सब समान ही रह सकता है। वैसे ही शास्त्रीय विधानकी मान्यताके साथ इतर पाषाणों और देवमूर्तियोंमें आकाश-पातालका अन्तर रहता है। शास्त्रीय मान्यता समाप्त होते ही वे अपूज्य हो जाते हैं। शास्त्रानुसार रजस्वला तथा अन्त्यजके मन्दिरमें प्रवेश करनेसे मूर्तिस्पर्शसे देवत्वकी हानि होती है, देवताका कोप होता है, मूर्तिमें प्रेत-पिशाचका निवास होता है, उस मूर्तिकी पूजा या दर्शनसे पाप होता है, राज्यकी हानि होती है। ये सभी बातें उन्हीं ग्रन्थोंमें हैं, जिनके आधारपर मूर्तिपूजा चलती है। इसमें न तामसक्रोधकी न कोई

शापकी ही बात है। यह तो शास्त्रकी ही सम्मति है।

स्पष्ट है 'सनातनधर्मी पत्थरकी पूजा नहीं करते', किंतु शास्त्रके अनुसार मूर्तिमें आवाहित परमात्मतत्त्व या देवत्वकी पूजा करते हैं। प्रत्यक्ष, अनुमान, विज्ञान आदि किसी प्रमाणके आधारपर अजायबघरकी मूर्ति या बाजारकी मूर्तिसे मन्दिरकी मूर्तिमें भेद नहीं सिद्ध हो सकता, किंतु शास्त्रके ही आधारपर इतर मूर्तियोंसे मन्दिरकी शास्त्र-प्रतिष्ठित मूर्तिका भेद विदित होता है। फिर तो जैसे शास्त्रविधिके अनुसार मूर्तिमें देवत्व आता है, उसी तरह शास्त्रविधिका उल्लंघन होनेसे मूर्तिसे देवत्वका अपगम होना भी जाना जाता है। फिर तो पुनः प्रतिष्ठा आदि बिना किये, उस मूर्तिका दर्शन, पूजन आदि हानिकारक ही होता है।

जो लोग कहते हैं कि—

अदृश्यान्यपि दृश्यानि दुरवस्थान्यपि प्रिये।
भग्नान्यपि च कालेन तानि पूज्यानि सुन्दरि॥

काशीखण्डके इस वचनानुसार अदृश्य, दृश्य, दुरवस्थ अर्थात् यवनों, अन्त्यजोंसे स्पृष्ट या प्रक्षिप्त तथा खण्डित सभी लिंग पूज्य हैं, वे वाक्योंके समन्वयकी पद्धति नहीं समझते हैं।

'अकृतायां तु निष्कृत्यामपूज्यं सर्वथा बुधैः॥'

(वि०सं० २५।६)

'अकृतायान्तु निष्कृत्यां स्पृष्टाः कुप्यन्ति देवताः।
पूजिता वा'

(वि०सं० २५।५)

विलम्बने तु निष्कृत्या विनश्येद्देवसन्निधिः॥
तत्स्थाः प्रेता भयं कुर्युर्व्याधिशोकादिभिर्नृणाम्॥
प्रायश्चित्तं यथोत्साहमन्यथा सर्वनाशनम्॥

(वि०सं० २५।१४)

जबकि इन वचनोंके अनुसार स्पष्ट है कि बिना प्रायश्चित्त किये पूजा करनेसे देवताका प्रकोप एवं पूजकका सर्वनाश हो जाता है।

स्पष्ट है कि इन दोनों प्रकारके वाक्योंकी एक-वाक्यता करके काशीखण्डके वचनका यही अर्थ है कि उपर्युक्त अदृश्य, दृश्य, दुरवस्थादि लिंगोंकी पूज्यता प्रायश्चित्तके अनन्तर ही कही गयी है।

कुछ सज्जनोंका यह कहना है कि स्वयम्भूलिंगमें अस्पृश्य-स्पृश्य दोष नहीं लगता—यह भी ठीक नहीं है; क्योंकि प्रायश्चित्तके अनन्तर पूजा आदि ज्योतिर्लिंग, स्वयम्भूलिंगकी ही होती है, साधारण मानव आदिद्वारा प्रतिष्ठापित लिंग तो अस्पृश्य-स्पृश्य आदि होनेपर त्याज्य ही होते हैं।

ब्रह्मवैवर्त्तपुराणके 'काशी-रहस्य' में जिस ज्योतिर्लिंगकी उत्पत्ति कही गयी है, वह पुराने मन्दिरमें विद्यमान अन्त्यज-प्रवेश-दूषित लिंग मूल ज्योतिर्लिंग नहीं है। त्रिस्थलीसेतुमें नारायणभट्टने स्पष्ट लिखा है कि वर्तमान लिंग वह पुराना ज्योतिर्लिंग नहीं है—'**अथ लिङ्गमपनीयते कालवशात् पुरुषैः लिङ्गान्तरमानीयते च।**' इत्यादि। वर्तमान मन्दिरमें अहिल्याबाईद्वारा आनीत नार्मदलिंग ही स्थापित है।

'देवता नित्य शुद्ध है, उसमें अशुद्धि आ ही नहीं सकती। वह संसारको शुद्ध करता है, उसे कौन शुद्ध कर सका है' इत्यादि प्रश्न अनभिज्ञतामूलक हैं। यदि ऐसी ही बात है, तो उसे स्नान क्यों कराया जाय? भोग क्यों लगाया जाय? दीप क्यों दिखाया जाय? यह भी प्रश्न उठेंगे ही। वस्तुतः देवता कौन है, कैसे है, उसकी पूजा कैसे हो, शुद्धि कैसे हो? यह सब शास्त्रीय विधान हैं। अतः शास्त्रके बिना केवल दुष्टतापूर्ण तर्काभासोंको उठाना निरर्थक है।

आज अनेक सज्जन 'सामाजिक समन्वय' करनेका दम भर रहे हैं। परंतु सरकार एवं हरिजनोंके बर्बरतापूर्ण मन्दिर-मर्यादा-भ्रंश करनेकी कार्यवाही रोकनेकी हिम्मत इनमें नहीं थी। किसी धार्मिक समाजकी धार्मिक मर्यादा बिगाड़ना समन्वय नहीं, विघटन है। ईश्वर सबका भले हो, परंतु मस्जिद उसकी है, जिसका कुरान-हदीस आदिमें विश्वास है। गिरजाघर उन्हींका है, जिनका 'बाइबिल' में विश्वास है। इसी तरह

मन्दिर उन्हींका है, जिनका मन्दिर एवं मूर्तिपूजाविधायक शास्त्रमें विश्वास है और उन्हींका मन्दिरमें अधिकार है। कोई मस्जिदमें वाराहपूजा या शंखनिनाद करना चाहे तो उसे ऐसी स्वाधीनता नहीं मिल सकती। इसी तरह मन्दिरोंमें शास्त्रोक्त नियमोंके विरुद्ध आचरण करनेका अधिकार किसीको नहीं हो सकता। समन्वयका मार्ग यही है, जो हम लोग कहते हैं कि 'अपने-अपने विश्वासके अनुसार सब अपने-अपने धर्मका पालन करें, दूसरोंके धर्मपर कोई आक्रमण न करे।' एक-दूसरेपर आक्रमण करे और समन्वयकी आशा रखे, यह मूर्खता ही है। कोई किसीको स्वयं चिकोटी काटे और यदि दूसरा रोये तो कहे कि 'हल्ला मचाना ठीक नहीं' उसी ढंगकी घटना यहाँकी है। शास्त्र-विश्वासियोंपर समन्वयका मार्ग ठुकराकर आक्रमण करना और उनके विरोधके लिये बाध्य होनेपर उनपर विघटनका उत्तरदायित्व डालना भी वैसे ही है। वस्तुतः हल्ला मचानेकी जिम्मेदारी चिकोटी काटनेवालेपर है, रोनेवालेपर नहीं। इसी तरह मन्दिरकी मर्यादा तोड़नेवालोंपर विघटनका उत्तरदायित्व है। जो मन्दिर छोड़कर अलग व्यवस्था करते हैं, उनपर विघटनका उत्तरदायित्व नहीं है। सर्वविदित है कि हम लोगोंने समन्वयका सुन्दर मार्ग उपस्थित किया था। 'विश्वनाथमन्दिरकी पूर्वकी गलीका झरोखा बड़ा कर दिया जाय। वहाँसे हरिजन भी दर्शन करें। सभी विद्वान् वहींसे दर्शन करें। काशीनरेश भी वहाँसे दर्शन करें। इस तरह हरिजनोंको दर्शन भी होगा और बराबरीका अनुभव भी होगा, साथ ही विश्वनाथमन्दिरकी मर्यादा भी सुरक्षित रहेगी। मन्दिर अजायबघर न बन जायगा।' परंतु उसे नहीं माना गया।

किसी अल्पसंख्यक समाजको भी अनुचित रूपसे नहीं दबाया जा सकता। शास्त्र-विश्वासियोंको दबाकर सदा नहीं रखा जा सकता। धूलि भी अपमानित होनेपर सिरपर चढ़ती है। आज कोई कुरान, बाइबिल या गुरुग्रन्थसाहबको अप्रमाणित नहीं कर सकता। फिर हम हिन्दुओंके शास्त्रोंको कोई कैसे अप्रमाणित कर सकेगा? यदि अन्य लोगोंके

सिद्धान्तों, आचारोंको असंगत, अनर्गल नहीं कहा जा सकता, तो हम शास्त्र-विश्वासी सनातनधर्मियोंके सिद्धान्तों, आचारोंको भी ठुकराया नहीं जा सकता। ऐसी स्थितिमें हमारे सिद्धान्तों-शास्त्रोंको अप्रमाणित करनेवालोंका हमलोग यावज्जीवन मुकाबला करेंगे। मरते समय शिष्य-प्रशिष्योंको मुकाबला करनेके लिये कह जायँगे।

अभी भी हम लोग उचित समझौतेके लिये तैयार हैं। विश्वनाथके मन्दिर तथा लिंगका शास्त्रविधिके अनुसार प्रायश्चित्त हो, महाशान्ति एवं पुन: प्रतिष्ठा हो, पूर्वकी गलीका झरोखा बड़ा किया जाय, वहाँसे हरिजन और हम सभी लोग दर्शन करें, सबका समन्वय हो, शास्त्र एवं शास्त्रोक्त मन्दिरकी मर्यादा सुरक्षित हो। विचार-विनिमयके लिये आज भी हमारे यहाँ द्वार खुला है।

जब विभिन्न समुदायोंको अपने विश्वासके अनुसार बर्ताव करनेका अधिकार है, तब फिर शास्त्रविश्वासी सनातनधर्मियोंको ही अपने विश्वासके अनुसार शास्त्रीय बर्ताव करनेका अधिकार क्यों नहीं? यह लोकतन्त्रका स्वभाविक नियम है। इसमें किसीसे कोई रियायत नहीं अपेक्षित है। **'नवीन विश्वनाथमन्दिरमें भी इस प्रकारकी व्यवस्था बनायी गयी है कि मन्दिरकी शास्त्रोक्त मर्यादा सुरक्षित रहे, हरिजनोंको भी दर्शन हो सके और उन्हें समानताका अनुभव भी हो। शास्त्रानुरागी ब्राह्मण एवं हरिजन सभीका सनातन धर्ममें पूर्ण आदर है।**

ब्रह्महत्यादि पापयुक्त ब्राह्मणको भी प्रायश्चित्तदशामें मन्दिर-प्रवेश, मूर्तिस्पर्श आदिका अधिकार नहीं होता। जो प्राणी स्वयं ब्रह्महत्यादि पापोंके प्रायश्चित्त नहीं करते, उन्हें उन पापोंका प्रायश्चित्त करनेके लिये अन्त्यजादि योनियाँ मिलती हैं। अत: जैसे प्रायश्चित्तदशामें ब्राह्मणोंके लिये मन्दिर-प्रवेशका निषेध है, वैसे ही अन्त्यजोंका भी मन्दिर-प्रवेश आदि निषिद्ध है। जैसे बालहितार्थ माता बच्चोंके दुश्चिकित्स्य व्रणोंके छेदनार्थ प्रयत्नशील होती है, वैसे ही भगवान् और उनके शास्त्र प्राणिहितार्थ यथायोग्य विधि-निषेध नियत करके तदनुसार फल देते हैं।

अत: सबको ही शास्त्रानुसार स्वधर्मनिष्ठ होनेका ही प्रयत्न करना चाहिये। इससे ब्राह्मण या हरिजन ही नहीं, अपितु प्राणिमात्रका कल्याण हो सकता है। यही प्राणियोंमें सद्भावना एवं विश्वकल्याणका मार्ग है। ईश्वर एवं शास्त्रको ठुकराना सर्वथा हानिकारक ही है।

कुछ लोग कहते हैं कि 'हरिजन मन्दिर-प्रवेश न होनेसे हरिजन ईसाई या मुसलमान बन जायेंगे। इसलिये सबको मन्दिर-प्रवेशका समर्थन करना चाहिये।' परंतु यह भी भ्रम ही है; क्योंकि शास्त्र-विश्वास-रक्षण ही हिन्दू जाति-रक्षणका मूल है। जिन अन्त्यजोंको शास्त्रोंमें विश्वास है, वे आज भी कट्टर हिन्दू हैं। जिन ब्राह्मणों-पण्डितोंको शास्त्रोंपर विश्वास नहीं, वे ब्राह्मण पण्डित होकर भी ईसाई हो जाते हैं।

ईसाई कहते हैं कि 'वेदादि शास्त्र कभीके लिये उपयोगी रहें होंगे, किंतु आजके लिये वे अनुपयुक्त हैं।' मुसलमान भी यही कहते हैं। शास्त्रविरोधी या शास्त्रोंमें रद्दो-बदलका उपदेश देनेवाले भी यही कहते हैं। 'उनमें रद्दो-बदल होनेकी आवश्यकता है।' जनता सोचती है कि जब यही बात मुसलमान कहते हैं, यही ईसाई कहते हैं, यही हमारे नेता कहते हैं, तब फिर हम ईसाई ही क्यों न बनें? वस्तुत: शास्त्र-विश्वास-रक्षण ही हिन्दू जाति-रक्षणका मूल है।

वियोगीहरिजीका स्वामीजीको पत्र

[जब सामाजिक समताके नामपर कुछ नेताओंने अन्त्यजोंके मन्दिर-प्रवेशका दुर्भाग्यपूर्ण अभियान चलाया तो धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज तथा हरिजन-सेवक-संघके प्रधानमन्त्री एवं गाँधीवादी नेता श्रीवियोगी हरिके बीच जो पत्राचार हुआ, वह वस्तु-स्थितिकी यथार्थताको समझनेके लिये उपयोगी है। अतएव उसे आगे अविकल रूपमें प्रस्तुत किया जा रहा है—]

श्रद्धेय स्वामीजी महाराज,

सादर हरि:स्मरणम्।

आपका २२-४-५४ का स्नेहसिक्त पत्र मुझे समयपर मिल गया था। आपकी मुझपर कृपा है, यह मेरे लिये गौरवकी बात है।

श्रीविश्वनाथमन्दिर-प्रवेशके सम्बन्धमें मैं फिर एक बार आपसे इस पत्रद्वारा विनम्र निवेदन करना चाहता हूँ। आपने अपने पत्रमें जो तर्क उपस्थित किये थे, मुझे उनसे समाधान नहीं हुआ, यह मैं उन्हीं शब्दोंमें फिर आपसे निवेदन करता हूँ कि आप शुद्ध ज्ञान-भक्तिपूर्ण अपने धर्मनिष्ठ कारुणिक अन्त:करणसे इस प्रश्नपर विचार करें। शास्त्रोंका विवाद इस प्रकारके धर्मसाक्षात्कारी अन्त:करणमें स्थान नहीं पाता। जिन अनेक ग्रन्थोंको हम शास्त्र मानते हैं, उनमें पक्ष और विपक्षके सभी प्रकारके प्रमाण-वचन देखनेमें आते हैं।

आप युगधर्मको नहीं जानते हैं, ऐसा कहनेकी धृष्टता मैं नहीं करूँगा। मैं समस्त भारतवर्षमें हरिजन-कार्यके सिलसिलेमें घूमता रहता हूँ और हरिजनोंके प्रत्यक्ष सम्पर्कमें आता हूँ। अपने इन अनुभवोंके आधारपर मैं मानता हूँ कि अधिकांश हरिजनोंके हृदयमें आज भी हमारे धर्मके प्रति श्रद्धा और अनुराग है। मेरा इतना ही निवेदन है कि उस श्रद्धा और धर्मानुरागको क्षीण न होने दिया जाय। पाकिस्तान जिन मुसलमानोंने बनाया, उनमेंसे सीधे अरब और फारससे आये हुए मुसलमानोंके वंशधर कितने हैं? हमारे अपने ही भाइयोंने इस्लामको अपनाया और

फिर अपने अपमानोंका बदला लेनेके लिये क्या-क्या नहीं किया! दक्षिण भारतमें आज लाखोंकी संख्यामें हमारे यही हरिजन-भाई ईसाई-धर्मावलम्बी हो गये हैं। अत: हिन्दूधर्मके जीवन-मरणके इस प्रश्नपर आप व्यावहारिक दृष्टिसे, केवल शास्त्रीय दृष्टिसे नहीं, गम्भीरतापूर्वक विचार कीजिये, ऐसा मेरा सविनय निवेदन है।

विश्वनाथमन्दिर-प्रवेशके प्रश्नसे अनेक धर्मश्रद्धालु हरिजनोंके हृदयमें वेदना और क्षोभ हो रहा है और उसका परिणाम आगे चलकर भयंकर या विस्फोटमय हो सकता है।

यह तो आप मानते हैं कि 'देशके प्राय: सभी विख्यात मन्दिरोंमें हरिजनोंका प्रवेश हो चुका है', फिर श्रीविश्वनाथ-मन्दिरको ही क्यों अपवादरूप माना जाय? भारतीय लोकसभा जो कानून शीघ्र ही पास करनेवाली है, उसके अनुसार तो सब मन्दिरोंमें हरिजनोंका प्रवेश हो ही जायगा, किंतु कानूनद्वारा प्रवेशका होना मैं स्वयं अच्छा नहीं समझता हूँ। अत: पहले ही युगधर्मकी अवज्ञा न करें, आप-जैसे धर्मनिष्ठ संन्यासी स्वयं अपने साथ हरिजनोंको श्रीविश्वनाथमन्दिरमें सबके समान, उसी द्वारसे दर्शनार्थ ले जायँ, जिस द्वारसे कि सवर्ण और अज्ञातरूपसे हरिजन भी जाते हैं।

इस दृष्टिकोणके प्रकाशमें यह अच्छा होगा कि जिन सनातनी भाइयोंने बनारसके मुंसिफकी अदालतमें मामला चला रखा है और जिनके फलस्वरूप 'निषेधाज्ञा' श्रीविश्वनाथ-मन्दिर तथा अन्नपूर्णा-मन्दिरपर लगी हुई है, उसे वे तथा हरिजन भी अपने मामलोंको वापस ले लें। इससे हमारा रास्ता साफ हो जायगा।

क्या मैं आशा करूँ कि मेरे इस पत्रका उत्तर लिखितरूपमें नहीं, किंतु कार्यरूपमें देनेकी आप कृपा करेंगे। मैं इस पत्रको प्रकाशित नहीं करा रहा हूँ।

स्वामी करपात्रीजी महाराज,
गंगा तरंग,
नगवा, काशी

विनीत
ह० वियोगीहरि, प्रधानमन्त्री
हरिजन सेवक-संघ, दिल्ली

वियोगीहरिजीको श्रीस्वामीजीका उत्तर

स्वस्तिश्री वियोगीहरिजी,

नारायण स्मरण।

गत २७ तारीखका आपका पत्र मिला। ७ महीने पश्चात् मेरे पत्रका स्मरण तो आया। आप अपने पत्रका उत्तर 'लिखित रूप' में नहीं चाहते, पर आपने स्वयं उसमें जो तर्क उपस्थित किये हैं, उनपर कुछ लिखना तो आवश्यक ही है। यदि किसी निष्कर्षपर पहुँचना है तो तर्कोंसे काम लेना ही पड़ेगा।

आपने अपने पत्रमें अन्तःकरणके पूर्व 'शुद्ध ज्ञान-भक्तिपूर्ण', 'धर्मनिष्ठ' एवं 'कारुणिक' विशेषण रखकर विचार सुगम बना दिया है। भक्ति, ज्ञान तथा धर्मका परिज्ञान एवं उनकी सम्यक्ता, शुद्धता तथा उपादेयता प्रत्यक्षानुमान-आगमादि प्रमाणोंके आधारपर ही मान्य होती है। प्रमाणनिरपेक्ष बुद्धि अव्यभिचारिणी तथा अशंकनीय नहीं हो सकती। अनुभव, अन्तरात्माकी प्रेरणा, इतिहास आदिका स्वतन्त्र रूपसे प्रामाण्य शिष्टसम्मत नहीं। कुछ विशिष्ट पुरुष अपने अनुयायियोंकी दृष्टिमें भले ही सर्वज्ञ हों, किंतु सर्वदृष्टिसे उनकी सर्वज्ञता संप्रतिपन्न नहीं। यदि सभी विशिष्ट लोग सर्वज्ञ हों, तो उनमें मतभेद नहीं होना चाहिये; परंतु मतभेद स्पष्ट ही है। फिर किसका मत ठीक, किसका नहीं, यह कहना कठिन है। अतएव भारतीय आस्तिक अपौरुषेय वेदादि शास्त्रोंको प्रमाण मानकर ही भक्ति, ज्ञान, धर्म आदिका निर्णय करते हैं। इस तरह प्रायः सभी धर्म, सम्प्रदायोंमें तत्तद् धर्मग्रन्थ मान्य होते हैं। उन्हींके आधारपर धर्म-भक्ति आदिका निर्णय होता है। मन्दिरोंमें मूर्तियोंकी स्थापना एवं अर्चा-पूजा केवल किसी भावनाके आधारपर नहीं, शास्त्रोंके आधारपर हुई है और अद्यावधि उन्हींके अनुसार ही होती है। अतः मन्दिर-मर्यादाका परिज्ञान शास्त्रानुसार ही हो सकता है। जो मन्दिर या देवता शास्त्रानपेक्ष भावनामूलक ही हों, उनमें भावनानुसार व्यवहार ठीक ही है। शास्त्रमूलक मन्दिरमें

मनमानी करना अत्यन्त अनुचित है। अब रही 'कारुणिक' की बात, हितपर्यवसायिनी करुणा-ही-करुणा है। अतएव चिकित्साशास्त्रानभिज्ञकी करुणा आतुरके लिये हानिकारक होती है। हितैषीको कहीं-कहीं कठोरता भी धारण करनी पड़ती है। ***'व्याधिनास हित जननी गनै न सो सिसु पीर'*** यदि मेरे अन्तःकरणमें हरिजनोंके प्रति करुणा न होती तो मैं यह प्रश्न कदापि न उठाता।

आपने लिखा है कि 'शास्त्रोंका विवाद धर्मसाक्षात्कारी अन्तःकरणमें स्थान नहीं पाता।' जिन अनेक ग्रन्थोंको हम शास्त्र मानते हैं। उनमें पक्ष और विपक्ष सभी प्रकारके प्रमाण-वचन देखनेमें आते हैं। जब 'धर्मसाक्षात्कार' की बात आयी, तब फिर शास्त्रोंको मानना ही पड़ेगा। आदि अपौरुषेय वेद एवं तन्मूलक रामायण, महाभारत, पुराण, मनु, याज्ञवल्क्यादि आर्ष धर्मग्रन्थ हैं, शास्त्र हैं। पूर्वोत्तर मीमांसाकी दृष्टिसे उनके सभी वचन पूर्णरूपसे समन्वित है, उनमें संशय या विभ्रम केवल अधिकारनिबन्धन ही है। शास्त्रोंमें विचार है, विवाद नहीं और साक्षात्कृतधर्मा महर्षियोंके हृदयमें ही शास्त्रोंका स्थान है। श्रुति, स्मृति भगवान्की आज्ञा है, उनका उल्लंघन भगवद्भक्तके लिये अनुचित है, ***'कल्प कल्प भरि यक यक नरका, परहिं जे दूषहिं श्रुति करि तरका'*** यह परम भक्त तुलसीदासका ही कथन है।

आपने 'धर्म' की भी चर्चा की है, वह क्या है, इसपर भी विचार कर लेना चाहिये। जो शास्त्रीय दृष्टिके अनुसार विहित हो वही धर्म होता है, यदि तत्तद् युगोंमें विहित कर्मोंको युगधर्म कहा जाय तो यह अवश्य मान्य है। किसी आर्ष धर्मग्रन्थमें कलियुगके लिये अन्त्यज मन्दिरप्रवेश विहित हो तो अवश्य मान्य होगा। परंतु यदि तत्तद् युगोंमें बाहुल्येन प्रचलित यत्किंचित् कर्मको युगधर्म माना जाय तो आस्तिक सर्वथा ही उसका विरोध करेंगे, स्वाभाविक, पाशविक, काम, कर्म, ज्ञानको रोकनेके लिये शास्त्रीय कामकर्म ज्ञानका अवलम्बन किया जाता है, वही **'अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा'** का अभिप्राय है। जलादि प्रवाहमें

निश्चेष्ट होकर मृतक ही बहता है, जीवित प्राणी तो अवश्य ही प्रवाह काटकर गन्तव्य स्थानकी ओर जानेका प्रयत्न करेगा, किंचित् प्रवाहानुसरणका भी लक्ष्य प्रवाहातिलम्बन ही होता है। शास्त्रविरोध पशुधर्मवत् विगर्हित है, आपको अधिकांश हरिजनोंके हृदयमें धर्मके प्रति श्रद्धा और अनुरागका अनुभव हुआ है—यह प्रसन्नताकी बात है, आपकी तरह मैं भी यह चाहता हूँ कि वह श्रद्धा और अनुराग क्षीण न होने दिया जाय, किंतु शास्त्रानुसार श्रद्धा ही वस्तुत: श्रद्धा है, यदि शास्त्रविपरीत श्रद्धा हो गयी तो धर्म-विश्वास सर्वथा निराधार एवं व्यामोहमात्र रह जायगा। कोई मुसलमान कुरान तथा हदीसमें विश्वास न रखकर इस्लामभक्त नहीं कहा जा सकता और न वह उसका भला ही कर सकता है, यही बात अन्य धर्मावलम्बियोंके सम्बन्धमें भी है।

आपने भी बहुलोंकी तरह अपनी धारणा बना ली है कि वैदिक धर्मकी तथाकथित अनुदारताके कारण लोग उसे छोड़ते जा रहे हैं, पर क्या यह सब सच है? यह अवश्य है कि पहले कितने ही हिन्दू मुसलमान बन गये थे, पर भय, प्रलोभन तथा अन्य ऐतिहासिक कारण रहे हैं। यह नहीं कहा जा सकता कि जितने हिन्दू मुसलमान हुए हैं, वे सबके सब अन्त्यज ही थे। शास्त्र-अविश्वासी लोग ही धर्मान्तरणके शिकार बनते हैं। केवल विदेशी धर्मप्रचारकोंद्वारा ही नहीं, दुर्भाग्यवश अपने यहाँके नेताओंद्वारा ही पत्रों, लेखों, उपदेशों, ब्राडकास्टोंद्वारा शास्त्रोंको वर्तमानकालके अनुपयुक्त बतलाया जाता है, इस तरह शास्त्रोंपरसे आस्था हटायी जा रही है। इन्हीं कारणोंसे न केवल अन्त्यज, अपितु अनेक ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि भी ईसाई-मुसलमान होते जा रहे हैं, जिनके मन्दिरप्रवेश-वेदाध्ययन आदिमें कोई बाधा नहीं है। फलत: लोगोंको ईसाई या मुसलमान बनानेके लिये शास्त्रों एवं शास्त्रमर्यादाओंके निन्दक ही जिम्मेदार हैं, न कि वे लोग जो शास्त्रोंपर दृढ़ विश्वास रखते हैं और उन्हींका प्रचार करते हैं। हमारे शास्त्रोंने तो स्वधर्मस्थित अन्त्यजको भी स्वर्गभागी

और स्वधर्मविमुख ब्राह्मणको भी नरकभागी होना बतलाया है। इसीलिये तो **'स्वधर्मे निधनं श्रेय:'** का उपदेश है।

आपने हिन्दूधर्मके जीवन-मरणके इस प्रश्नपर केवल शास्त्रीय दृष्टिसे नहीं, व्यावहारिक दृष्टिसे गम्भीरतापूर्वक विचार करनेका अनुरोध किया है, पर यदि गम्भीरतापूर्वक विचार किया जाय तो क्या शास्त्रविरुद्ध भी व्यावहारिक दृष्टिसे किसीका लाभ हो सकता है? शास्त्रविश्वासीके लिये हरिनामोच्चारण तथा अपनी मर्यादानुसार देवदर्शनसे परम कल्याण होता है, शास्त्रमें जिसे विश्वास न हो, वह भले ही कानून या पुलिसके बलपर देवमूर्तिको गलेमें बाँध ले या घोलकर पी जाय, शास्त्रीय दृष्टिसे उसका कुछ भी फल नहीं होता। हाँ, शास्त्राज्ञाकी अवहेलनाका फल अवश्य मिलेगा और राष्ट्रको भी उसका भागी बनना पड़ेगा।

रुद्रस्य वाथ विष्णोर्वा प्रकाराभ्यन्तरे यदि।
रजस्वला वधूश्चैव चाण्डालश्च समागत:॥
तद्देवस्य कलाहानि: राज्ञो मरणमेव च।
तद्राष्ट्रस्य क्षय: प्रोक्त: शस्यानां नाशनं परम्॥

यह तो हुई सिद्धान्तकी बात। श्रीविश्वनाथमन्दिरके सम्बन्धमें आपने लिखा है कि जब सभी विख्यात मन्दिरोंमें प्रवेश हो चुका है, तब इसे ही अपवादरूपमें क्यों माना जाता है? किंतु उत्सर्गके साथ ही अपवाद भी रहता है, यह कोई अनहोनी बात नहीं, आज धार्मिक स्वतन्त्रताका ढोल पीटा जा रहा है, किसी समुदायके धर्म एवं विश्वासपर हस्तक्षेप न करनेकी बात कही जा रही है। चीनसे लौटकर नेहरूजीने ही कहा है कि किसी राष्ट्रके विचारों, विश्वासोंपर किसीको हस्तक्षेप करनेका अधिकार नहीं, यहाँतक कि वन्यजातियोंके लोगोंको भी विश्वास-संस्कार आदिके रक्षणकी बात कही जाती है। फिर प्राचीन शास्त्र एवं मर्यादामें विश्वास रखनेवालोंके धार्मिक विषयोंमें क्यों हस्तक्षेप किया जाय? यह सर्वथा न्यायोचित है कि शास्त्रानुसार ही प्राचीन मन्दिरोंमें

पूजनका अधिकार हो, जो शास्त्रोंमें विश्वास नहीं रखते, उनसे मन्दिरसे क्या मतलब? भले ही वे अपने नये विचारके अनुसार मन्दिर, मूर्तियाँ बनवायें, इसमें उन्हें कोई नहीं रोकता।

हमारा भी विश्वास है कि 'श्रीविश्वनाथमन्दिरमें अन्त्यजप्रवेशकी समस्याका सन्तोषजनक हल निकल सकता है यदि इसपर निष्पक्ष एवं गम्भीरतापूर्वक विचार किया जाय, इसीलिये मैंने अपने पहले पत्रमें विचार-विनिमयके लिये आपसे अनुरोध किया था, अब भी मेरी समझमें यदि चार-पाँच विद्वान् बैठ जायँ तो कोई-न-कोई मार्ग निकल ही आ सकता है, मन्दिरका झरोखा इसलिये बड़ा किया गया कि 'वहाँसे अन्त्यजोंको दर्शन हो सके' काशीनरेशने वहींसे दर्शन किया और काशीके विद्वान् भी ऐसा ही करनेके लिये तैयार हैं, यदि इससे हरिजनोंको सन्तोष हो तो हम सहर्ष उनका स्वागत करते हुए उनको दर्शन करानेके लिये आयेंगे।

आपने अपने पत्रमें अदालतसे मामला उठा लेनेकी बात चलायी है, पर यदि श्रीविश्वनाथ-अन्नपूर्णामन्दिरके सम्बन्धमें हरिजन कानूनोंका सहारा न लें तो इसकी कोई आवश्यकता भी न रह जायगी, यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आप स्वयं कानूनद्वारा प्रवेशका होना अच्छा नहीं समझते। ऐसी स्थितिमें यही मार्ग रह जाता है कि 'दोनों पक्षोंके चुने हुए प्रतिनिधि सद्भावनापूर्ण आपसमें विचार-विनिमय करके ऐसा कोई मार्ग निकाल लें, जिसमें सबका कल्याण हो।'

अन्तमें हम आपको विश्वास दिलाते हैं कि 'हम हरिजनोंका वैसा ही कल्याण चाहते हैं कि जैसा कि आप, और इस सम्बन्धमें जो कुछ भी लिख रहे हैं, वह केवल उनके तथा राष्ट्रके हितकी दृष्टिसे ही।'

ह० करपात्रीस्वामी

नये विश्वनाथमन्दिरकी स्थापनाके औचित्यके सम्बन्धमें पूज्य आचार्य महानुभावोंके विचार

[श्रीविश्वनाथजीकी प्रतिष्ठाके कुछ समय बाद आषाढ़ शुक्ल ७ वि०सं० २०३१ के शुभ मुहूर्तपर नवमन्दिर-शिखर-प्रतिष्ठाके साथ श्रीमहागणपति, पराम्बा अन्नपूर्णा, श्रीराधामाधव, श्रीसीतारामलक्ष्मणकी भव्य मूर्तियोंकी प्रतिष्ठा भी सम्पन्न हुई। इस अवसरपर एक स्मारिकाका प्रकाशन किया गया, जिसमें लब्धप्रतिष्ठित संत-महात्माओं एवं विद्वानोंके लेख प्रकाशित हुए, जिनके कुछ अंश यहाँ प्रकाशित किये जा रहे हैं—]

सभी सम्प्रदायके प्रधान पुरुषोंका संगठित होना परमावश्यक

[जगद्गुरु शंकराचार्य अनन्तश्रीविभूषित स्वामी श्रीनिरंजनदेवजी तीर्थ, पुरीपीठाधीश्वर]

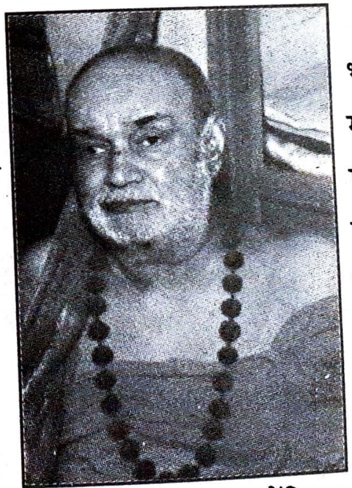

भगवान् अनाथनाथ-विश्वनाथ, भूतभावन शंकर, श्रीकाशी-विश्वनाथके मन्दिरकी परम पुण्यप्रद प्रतिष्ठाका आज पावन अवसर है। भगवान्‌के मन्दिरकी प्रतिष्ठा हो रही है, पर हिन्दू-जातिकी प्रतिष्ठा खतरेमें है। हिन्दुओंके नये-नये मन्दिर अवश्य बन रहे हैं, पर उनके पुराने मन्दिरोंकी दुर्दशा बड़ी ही वर्णनातीत है।

हिन्दुओंके सर्वोच्च तीर्थस्थानोंमें चारों-धाम अग्रगण्य हैं; क्योंकि हम हिन्दूजन चारों धामका महत्त्व भगवान् विष्णुके निवासस्थान (परम-धाम)-के समकक्ष ही मानते हैं। कितने खेदका विषय है कि पवित्रताकी साकार मूर्ति हमारे ये चारों धाम अब भक्तजनों और श्रद्धालु सामाजिकोंके पास नहीं रहकर, धर्मनिरपेक्ष सरकारके

हाथमें चल गये हैं। इनपर सरकारका ही सर्वाधिकार है, इसलिये समस्त शास्त्रीय व्यवस्थाएँ वहाँ सम्पूर्णरूपेण छिन्न-भिन्न हो चुकी हैं। बाह्य व्यवस्थाएँ अभी वर्तमानमें जो कुछ हैं, वे भी सर्वजनके लिये हितावह नहीं हैं। यह दुर्दशा तो हमने चारों धाम-जैसे सर्वोच्च मन्दिरोंकी कही। अब इसीका अनुमान लगाया जा सकता है कि हिन्दुओंके अन्यान्य मन्दिरोंपर तो शासकीय दृष्टिकोणकी अशुद्धिके कारण क्या बीत रही होगी!

सरकारने 'हिन्दू-धार्मिक-ट्रस्ट' (न्यास-विधान) बनाकर प्रायः अधिक आयवाले सभी मन्दिरोंपर अधिकार कर लिया है।

दुर्भाग्यवश, केवल हिन्दू जाति ही इस काले कानूनका शिकार है। इसी भारतमें रहनेवाली अन्य जातियोंके धार्मिक स्थानोंकी ओर कोई आँख उठाकर भी नहीं देख सकता, जबकि हमारे धार्मिक स्थानोंका सर्वस्व हरण किया जा चुका है। सरकारद्वारा कहा तो यह गया था कि भगवद्दर्शन सभीको करना चाहिये और इससे हम किसीकी रोटी-बेटी एक करने-जैसा अधार्मिक कृत्य थोड़े ही करने जा रहे हैं, किंतु कथनी और करनीका भेद उद्घाटित होते अधिक समय नहीं लगा और अब तो इस धर्मप्राण भारत देशके कई राज्योंमें अनादिकालसे चले आनेवाले धार्मिक स्थानों और मन्दिरोंमें अन्त्यजोंको अर्चकों (पुजारी)-के रूपमें भी रख दिया गया है।

'खाने-पीनेके लिये मैं किसीको नहीं कहता, मैं तो केवल छुआछूत मिटाना चाहता हूँ'—गाँधीजी भी कहा करते थे। पर अब तो उनके हाथका ही प्रसाद और चरणामृत लेना पड़ेगा।

शास्त्ररक्षा-समितिके अध्यक्ष डॉ० नलिनिरंजनसेनके प्रयत्नोंसे एक राज्यमें बननेवाले ऐसे काले कानूनको सुप्रीम कोर्टतक लड़कर रुकवाया गया था, पर कई राज्योंमें ये कानून अमली जामा पहन चुके हैं।

इन पंक्तियोंके लेखकने चारों पीठोंमेंसे एक पीठके उपपीठ मैनेजरको जो विधिविशेषज्ञ थे, पूछा—'यदि सरकार कानून बनाकर हमारे व्यक्तिगत मठ-मन्दिरादिकोंमें अन्त्यजोंको अर्चक नियुक्त करे तो हमें क्या कदम

उठाना चाहिये एवं उसमें सफलता भी मिल सकती है क्या?'

इसपर उन विधिविशेषज्ञ उपपीठ व्यवस्थापक महोदयने सर्वथा असमर्थता प्रकट करते हुए कहा कि ऐसी स्थितिमें हम पंगु हैं और कुछ भी नहीं कर सकते।

स्थिति यह है कि मन्दिरोंको भगवान्‌का स्थान माननेवाले लोगोंके लिये यह समस्या है, अन्यथा हमारी नयी व्यवस्थासे व्ययकी गयी धार्मिक सम्पत्ति भी सरकार किसी दिन हड़प लेगी।

अतः सभी सम्प्रदायके प्रधान पुरुषोंको इस गम्भीर समस्यापर विचार कर संगठित होकर प्रतीकारके लिये तत्परताके साथ प्रवृत्त होना चाहिये।

'भगवान्‌के मन्दिरकी प्रतिष्ठा सर्वदा बनी रहे, भगवान्‌के चरणोंमें निरन्तर प्रार्थनाके साथ, हम प्रयत्नमें भी वैसे ही लगे रहें'—यही इस अनिर्वचनीय अवसरपर प्रार्थना है।

शास्त्रीय परम्परा और नया विश्वनाथमन्दिर

[अनन्तश्रीविभूषित जगद्गुरुशंकराचार्य ज्योतिष्पीठाधीश्वर स्वामी श्रीस्वरूपानन्द-सरस्वतीजी महाराज, ज्योतिर्मठ बदरिकाश्रम]

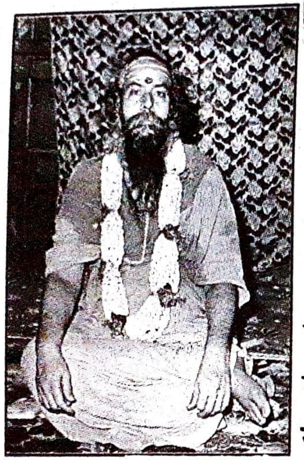

भारतीय-संस्कृति विश्वकी समस्त गौरवमयी संस्कृति-परम्पराओंकी मूर्धन्य रही है। इसका मुख्य कारण हमारे सर्व-साहित्यके बीजरूप वेद भगवान् हैं, जिन्हें ईश्वरीय ज्ञान कहा है। उनके अनादि, अविच्छिन्न सतत प्रवाहपूर्ण परम्परामें सनातन धर्मका समग्र संविधान सूत्रग्रथित मणिकी भाँति ओतप्रोत है। अतएव, '**न सोऽस्ति प्रत्ययो लोके यः शब्दानुगमादृते**' ऐसा महामनीषी भरतमुनिने कहकर प्रत्येक संकल्प विचारको शब्दमूलक माना है। वही सूक्ष्मातिसूक्ष्म वस्तुमें भी शब्दका अनुवेध रहता ही है। वही सूक्ष्म शब्द ईश्वरकी निःश्वासभूत वेद-सन्तति है। वेद अनादि अपौरुषेय हैं। वैदिक ज्ञान, वैदिक परम्परा किसी भी स्थितिमें परिवर्तनशील नहीं है। '**भूतं भव्यं भविष्यञ्च सर्वं वेदात् प्रसिद्ध्यति**' भूत-भविष्य-वर्तमान सभी वेदद्वारा प्रसिद्ध हैं। वेदोंकी नित्यता, अनादिता सर्वसिद्धान्त-सिद्ध है।

उन्हीं अपौरुषेय वेदोंद्वारा चातुर्वर्ण्य तथा चार आश्रमोंका संविधान-सृजन किया गया है। **ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीत्**, इत्यादि वेद-वाक्योंसे ब्राह्मणप्रभृति चारों वर्णोंकी उत्पत्ति वेदमूलक ही है। इसी प्रकार स्वर्गादि लोक भी वेदद्वारा ही सिद्ध हैं। इसी सिद्धान्तके अनुसार मनुस्मृतिकारने स्पष्ट कहा है '**बिभर्ति सर्वभूतानि वेदशास्त्रं सनातनम्**' कुल्लूकभट्ट इसकी टीका करते हुए लिखते है '**वेदशास्त्रं नित्यं सर्वभूतानि धारयति। तथा च हविरग्नौ हूयते सोऽग्निरादित्यमुपसर्पति, तत् सूर्यो रश्मिभिर्वर्षति, तेनान्नं भवति अथेह भूतानामुत्पत्तिः स्थितिश्चेति हविर्जायते।**' अर्थात्

वेद-शास्त्र ही समस्त विश्वको धारण कर रहे हैं। वेद-विधानद्वारा अग्निमें हवि डाली जाती है। हविपरिपूर्ण अग्नि सूर्यमण्डलमें पहुँचती है। सूर्य अपनी किरणोंद्वारा वर्षा करते हैं, वर्षासे अन्न और अन्नसे समस्त प्रजाकी उत्पत्ति और स्थिति होती है। विशेष क्या कहें, सेना, राज्य, दण्ड आदि सब कुछ वेदशास्त्रमूलक हैं और इन सबका सदुपयोग वेदशास्त्रवित् विद्वान् ही कर सकता है।

इस प्रकार वेद सर्व कार्यों में निर्भ्रान्त प्रमाण हैं, वेदमूलक होनेसे स्मृति-ग्रन्थ तथा वेदस्मृतिमूलक सत्पुरुषोंका आचार प्रमाण माना गया है। व्यवहारिक कार्योंमें भी जब वेदप्रामाण्य अपेक्षित है तब नितान्त अप्रत्यक्ष, अगोचर एवं बुद्धि-अगम्य धर्म, अधर्म, स्वर्ग, नरकादिकी सिद्धि तथा उनकी उपलब्धि-अनुपलब्धिविषयक ज्ञानमें वेदातिरिक्त अन्य प्रत्यक्षादि प्रमाण कैसे सफल हो सकते हैं? आजका बुद्धिजीवी वर्ग इन सब बातोंसे पीछा छुड़ानेके लिये स्वर्गादि नहीं हैं, केवल कल्पनामात्र हैं, ऐसा कहकर अपना पीछा छुड़ानेका प्रयत्न करता है, पर इतनेमात्रसे उसका पीछा नहीं छूट सकता। वृकभीति नेत्र-निमीलनसे कदापि दूर नहीं हो सकती। जो लोग स्मृति, पुराणोंमें विभिन्नता देखकर यह अनुमान करते हैं कि यह भेद देश, कालकी परिस्थितियोंके अनुसार किया गया है, इसलिये समयानुसार शास्त्र भी बदलते रहते हैं, यह उनका कहना सर्वथा भ्रममूलक और शास्त्र-सिद्धान्तकी अनभिज्ञताका द्योतक है। भला ईश्वरीय ज्ञान-मूलक स्मृतियों-पुराणोंमें भेदका प्ररोह कैसे माना जा सकता है? वेदमूलकत्वात् वे सभी प्रमाणकोटिमें हैं।

इस प्रकार सनातन परमात्माके सनातन वेदोंद्वारा जो संविधान है, वही सनातन धर्मका संविधान है। चूँकि ईश्वर अपरिवर्तनीय है, इसलिये उसका सनातन वेद भी अपरिवर्तनीय और सनातन धर्म भी अपरिवर्तनीय है। जो वेद-शास्त्रोंपर विश्वास न करके वर्ण-आश्रम मर्यादाओंपर कुठाराघात कर रहे हैं, वे वस्तुस्थितिसे अपरिचित होते हुए भारतीय ज्ञान-परम्परामें दीक्षित न होनेके कारण अपने तुच्छ स्वार्थोंके वशीभूत होकर लोक-परलोक दोनोंका विनाश कर रहे हैं।

वैदिक परम्पराके अनुसार वेदमें न केवल मनुष्यमात्रके कल्याणका मार्ग प्रशस्त किया गया है, अपितु कीट, पतंग, पशु, पक्षीको भी श्रेयोंका भागी बनानेका प्रयत्न किया गया है। पर कर्ममें मनुष्यका ही अधिकार होनेसे सब वेद-शास्त्रादि मनुष्यपर ही लागू होते हैं, इसीलिये **'तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्यव्यवस्थितौ'** कार्य और अकार्यकी व्यवस्थामें शास्त्र ही एकमात्र प्रमाण हैं। **'यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः। न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम्॥'** शास्त्र सिद्धान्तकी अवहेलनाकर स्वेच्छाचारसे प्रवृत्त होनेवाले पुरुष सिद्धिको प्राप्त नहीं कर सकते न सुख-शान्ति, परम गतिकी बात तो दूर रही।

वेद-शास्त्रोंमें चारों वर्णोंको अपने-अपने अधिकारके अनुसार श्रेय और प्रेय प्राप्तिके साधन बताये गये हैं। समान साधनोंद्वारा सभी जन समान फल प्राप्त नहीं कर सकते। यदि ऐसा हो तो फिर विभिन्न मर्यादाओंका कोई मूल्य ही नहीं रह जायगा। महाभाष्यकार महर्षि पतंजलिने मर्यादाकी सुरक्षाके लिये लौकिक दृष्टान्त देकर इसे अत्यन्त स्पष्ट कर दिया है, वे लिखते हैं—**'खेदात् स्त्रीषु प्रवृत्तिर्भवति। समानश्च खेदविगमो गम्यायाञ्चागम्यायाञ्च। तत्र नियमः क्रियते। इयं गम्येयमगम्या। इति।'** कामजन्य खेदसे स्त्रीमें प्रवृत्ति होती है, कामशान्ति गम्या और अगम्या स्त्रीमें समान है। पर शास्त्रकार नियम बनाते हैं। यहाँ प्रवृत्त हो, यहाँ प्रवृत्त मत हो। इस प्रकार प्रत्येक स्थलमें नियमका महत्त्व है।

यही नियम उपासनाका भी है। सब मनुष्योंको उपासनामें समानाधिकार नहीं प्राप्त है। यदि ऐसा हो जाय तो मन्दिर बनवाना, मूर्तियोंकी प्रतिष्ठा वेदमन्त्रोंद्वारा करना—इन सबकी क्या आवश्यकता? समान रूपसे दूकानोंकी मूर्तियोंके भी दर्शनकर श्रेय-प्राप्ति कर ली जाय; क्योंकि वहाँ सबको समान रूपसे दर्शन प्राप्त है, पर ऐसा कोई करनेको तैयार नहीं। वेद-मन्त्रोंद्वारा प्रतिष्ठित मूर्तियोंको ही अर्चन-पूजनमें उचित माना गया है। तब तो यह भी सिद्ध ही है कि जिस विधानद्वारा वेद-मन्त्रप्रतिष्ठित मूर्तियाँ फलदायक होती हैं, उस विधानद्वारा

अधिकारकी चर्चापर भी दृष्टिपात करना होगा। सब मनुष्योंके समान अधिकार नहीं। पिताका जो अधिकार है, वह पुत्रका नहीं। स्त्रीका जो अधिकार है, वह बहनका नहीं। इन सब बातोंको देखते हुए शास्त्रकी सूक्ष्म दृष्टिके सामने मनुष्य-दृष्टि; मानव-विचार नगण्य ही समझे जाते हैं।

देवार्चनके सम्बन्धमें भी **'नाक्षतैरर्चयेद्विष्णुं न तुलस्या विनायकम्। न दूर्वया यजेत् दुर्गां नोन्मत्तेन दिवाकरम्।'** चावलोंसे विष्णुभगवान्की पूजा न करे। तुलसी गणेशपर न अर्पण करे। दूर्वासे दुर्गाको न पूजे। धतूरे आदिसे सूर्यार्चन न करे। इस सबको देखते हुए, 'क्यों'? का प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि और देवताओंने चावलोंसे क्यों पूजन स्वीकार किया, विष्णुजीने क्यों नहीं? इसी प्रकार **'स्त्रीणामनुपनीतानां शूद्राणाञ्च जनाधिप। पूजने नाधिकारोऽस्ति विष्णोः शंकरस्य च।'** स्त्री, शूद्र, अनुपनीतोंका शालग्राम और नर्मदेश्वरके पूजनमें अधिकार नहीं। क्यों? इन सबका एकमात्र ही उत्तर है—शास्त्रप्रमाण। **'यच्छब्द आह तदस्माकं प्रमाणम्।'** जो शब्द कहता है, वही प्रमाण है।

यही बात काशीविश्वनाथके सम्बन्धमें है। काशीविश्वनाथ द्वादश ज्योतिर्लिंगोंमें अन्यतम है। वेद-शास्त्रादि-प्रतिपादित अधिकारी जब इस प्रकारके महान् पवित्रस्थानोंमें अपने अधिकारको भुलाकर ईर्ष्यावश प्रवृत्त होने लगते हैं, तब इन देवताओंकी कला क्षीण होने लगती है और वे यथेच्छ फल प्रदान नहीं कर सकते। इसी प्रकार समयपर अर्चन-पूजन न होना, भोग-राग न लगाना, शयनोत्थान आरती न होना आदिसे देवकला क्षीण हो जाती है। पहले भी जब-जब विधर्मियोंने विश्वनाथमन्दिरको दूषित किया, तब-तब प्राचीन क्षत्रियोंने भी इसी प्रकार नये विश्वनाथकी प्रतिष्ठा करायी। यही इस समय हुआ। वर्तमान शासनकी स्वेच्छाचारिताके फलस्वरूप नवीन विश्वनाथजीकी स्थापना करनी पड़ी। आवश्यक भी था। जिस हाथसे शालग्रामका पूजन किया जाय, वह हाथ पशुमारक हिंसकके हाथके समान त्रिकालमें भी नहीं हो सकता। जिस हाथको १० बार मिट्टी लगाकर स्वच्छ किया जाता

है, वह उस हाथकी समता कदापि नहीं कर सकता, जो या तो साबुनसे धोया जाता है, या धोया ही नहीं जाता। इस प्रकार साधिकार व्यक्तिद्वारा ही अर्चित-पूजित देवता अपनी समस्त कलाओंसे परिपूर्ण होकर यथेच्छ फलदानी होता है। इसके विपरीत जहाँ होता है, वहाँ दुर्भिक्ष, मरण, राष्ट्रनाशके लक्षण बन जाते हैं।

यद्यपि ये बातें आजके अविचारशील व्यक्तियोंके विपरीत पड़ती हों, पर देशका कल्याण चाहनेवाले महामनीषी सन्त इन बातोंकी चिन्ता न कर देशके—राष्ट्रके कल्याणके लिये मान-अपमान सहकर भी सचेष्ट रहते हैं। इस प्रकारके मनीषी व्यष्टिके उपकारसे ऊँचे उठकर समष्टिके उपकारके लिये सतत प्रयत्नशील रहते हैं। इस समय देशपर आयी हुई आपत्तियोंके बादल मण्डरा रहे हैं। भले ही कोई आधुनिक मस्तिष्कवाला इसका कारण अन्यथा समझे, पर हमलोग केवल धर्मका अतिक्रमण ही इसका कारण समझते हैं और वह है भी यथार्थ। **धर्म एव हतो हन्ति** अर्थात् अतिक्रमण किया हुआ धर्म मनुष्यको मार देता है। **'स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः'** अपने धर्ममें मर जाना भी श्रेयस्कर है, पर अन्यका धर्म भयोत्पादक होता है। इस प्रकारके सहस्रों वचन शास्त्रोंमें पाये जाते हैं। इन वचनोंका यथार्थ पालन करना शास्त्र-आज्ञाका पालन करना है। शास्त्रके सत्कारसे शास्त्रविधाताका आदेश-पालन होता है। संविधानके पालनसे निर्भीकता, प्रियता और पात्रता प्राप्त होती है। इस प्रकार नवीन विश्वनाथकी स्थापना शास्त्रके आदेश तथा मर्यादाकी सुरक्षाकी दृष्टिसे समुचित ही है। आस्तिकको शास्त्रविश्वासी धर्मात्माओं, साधु-संन्यासी, सद्गृहस्थोंको मर्यादित ढंगसे देवार्चन, विश्वनाथ-दर्शनसे सुख-शान्ति तथा ऐहिक-आमुष्मिक लाभ उठाना चाहिये।

नवीन काशीविश्वनाथमन्दिरमें ही दर्शन करें एवं कल्याण प्राप्त करें

[जगद्गुरुशंकराचार्य काशीपीठाधीश्वर परमहंस श्रीमहेश्वरानन्दसरस्वतीजी महाराज]

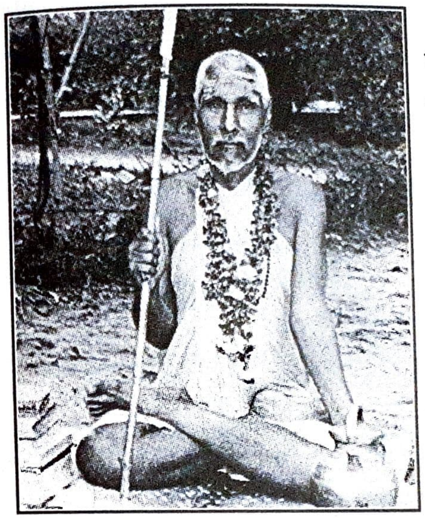

श्रीकाशीविश्वनाथके अनन्त गुणगणोंकी चर्चा वाणीको पवित्र करनेका प्रशस्त माध्यम है। भगवान् वेदव्यास काशी एवं श्रीकाशीविश्वनाथकी महिमाका वर्णन करते-करते आत्मविभोर हो जाते हैं। शिवपुराण, काशीखण्ड, काशीरहस्य आदिको देखनेवाले भक्तजनोंसे तीनों लोकोंसे विलक्षण काशी एवं उसमें नित्य सन्निहित श्रीविश्वनाथ, अन्नपूर्णा तथा भगवती गंगाका अद्भुत माहात्म्य छिपा नहीं है।

यह प्रसन्नताका विषय है कि श्रीकाशीविश्वनाथमन्दिरकी स्मारिका प्रकाशित की जा रही है। वास्तवमें, काशीमें नये काशीविश्वनाथमन्दिरकी स्थापना इस शतीकी एक अतिमहत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक घटना है तथा इसका सर्वाधिक श्रेय विश्ववन्द्य, भारत-हृदय-सम्राट् श्रीस्वामी करपात्रीजी महाराजको ही है। यदि यह नवीन काशीविश्वनाथमन्दिर स्थापित न हुआ होता तो सनातनी जन अभीतक काशीमें अपनी श्रद्धाके केन्द्रबिन्दु काशीविश्वनाथ-मन्दिरको न पाकर बहुत ही निराश होते।

यद्यपि 'विश्वनाथमन्दिर' नामसे अन्य मन्दिर हैं, पर उनकी शास्त्रीय मर्यादा सुरक्षित न रहनेसे वे इष्टप्राप्तिमें सहायक न होकर बाधक ही हैं, क्योंकि जिन शास्त्रोंके आधारपर मन्दिर एवं मूर्तिका अस्तित्व इष्टसाधनके लिये मान्य है, वे शास्त्र ही मन्दिर एवं मूर्तिकी पूजा-अर्चा आदिके सम्बन्धमें अधिकार एवं नियम भी बनाते हैं तभी यह भी स्पष्ट आदेश देते

हैं कि यथोक्त नियमोंका अधिकारानुसार पालन किये बिना मन्दिरमें दर्शन-पूजन अनिष्टके कारण हो जाते हैं।

अतः यह तथ्य है कि काशीमें नया काशीविश्वनाथमन्दिर ही शास्त्रीय मर्यादासे मर्यादित होनेके कारण भक्तजनके दर्शन-पूजनके योग्य है तथा अभीष्ट-प्राप्तिमें पूर्ण सहायक है। इन्हीं शब्दोंके साथ मैं अपना वक्तव्य शेष करता हूँ तथा निम्नोक्त पद्य-प्रसूनांजलि श्रीकाशीविश्वनाथके चरणोंमें समर्पित करता हूँ—

दुर्गाधीशो द्रुतिज्ञो द्रुतिनुतिविषयो दूरदृष्टिर्दुरीशो
दिव्यादिव्यैकराध्यो द्रुतिचरविषयो दूरवीक्षो दरिद्रः।
देवैः संकीर्तनीयो दलितदलदयादानदीक्षैकनिष्ठो
दानी दीनार्तिहारी भवदवदहनो दीयतां दृष्टिवृष्टिः॥ १॥
क्षेत्रज्ञः क्षेत्रनिष्ठः क्षयकलितकलः क्षात्रवर्गैकसेव्यः
क्षेत्राधीशोऽक्षरात्मा क्षितिप्रथिकरणः क्षालितः क्षेत्रदृश्यः।
क्षोण्या क्षीणोऽक्षरज्ञो क्षरपृथुकलितः क्षीणवीणैकगेयः
क्षौरः क्षोणीध्रवर्ण्यः क्षयतु मम बलक्षीणतां सक्षणं सः॥ २॥
क्रूरः क्रूरैककर्मा कलितकलकलैः कीर्तनीयः कृतिज्ञः
कालः कालैककालो विकलितकर्णः कारणाक्रान्तकीर्तिः।
कोपः कोपेऽप्यकुप्यन् कुपितकरकराघातकीलः कृतान्तः
कालव्यालालिमालः कलयतु कुशलं वः करालः कृपालुः॥ ३॥
गौरी स्निह्यतु मोदतां गणपतिः शुण्डामृतं वर्षताद्
नन्दीशः शुभवृष्टिमावितनुतां श्रीमान् गणाधीश्वरः।
वायुः सान्द्रसुखावहः प्रवहतां देवाः समृद्धादयाः
सम्पूर्तिं दधतां सुखस्य नितरां विश्वेश्वरः प्रीयताम्॥ ४॥
श्रीविश्वेश्वरमन्दिरं प्रविलसेत् सम्पूर्णसिद्धं शुभं
पुष्टं तुष्टं सुखाकरं प्रभवतां सम्मोदमोदावहं।
एतद्दर्शनकामना जगति संजायेत सन्निन्दतः
सर्वेषां भगवान् महेश्वरकृपापूर्णो निरीक्षेत नः॥ ५॥

महेश्वरानन्दः काशीपीठाधीश्वरः

श्रीकाशीविश्वनाथमन्दिर एवं शास्त्रीय मर्यादा

[अनन्तश्रीविभूषित स्वामी श्रीहरिहरानन्दसरस्वती (श्रीकरपात्रीजी महाराज)]

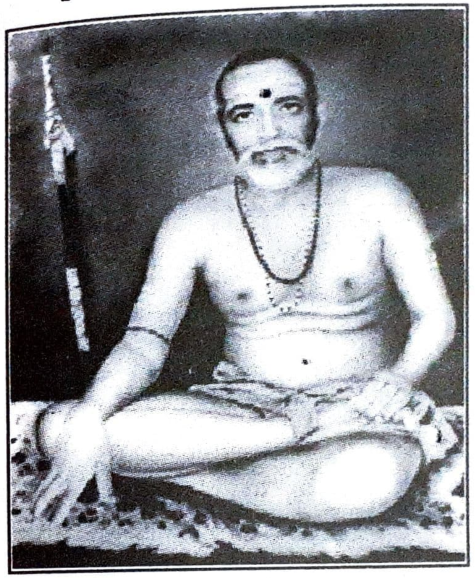

यह प्रसन्नताका विषय है कि श्रीकाशी-विश्वनाथमन्दिरमें श्रीअन्नपूर्णाजीकी प्रतिष्ठा सम्पन्न हो रही है।

वास्तवमें काशीका सर्वाधिक महत्त्व है। काशीपर भूतभावन विश्वनाथ एवं भगवती माता अन्नपूर्णाका सर्वाधिक विशेष स्नेह काशीखण्ड एवं काशीरहस्य देखनेसे स्पष्ट है।

आस्तिकोंके लिये दर्शन-पूजनकी दृष्टिसे मूर्तिका कितना महत्त्व है, इसे स्पष्ट करनेकी आवश्यकता नहीं है। काशीके विश्वनाथ एवं माता अन्नपूर्णाके दर्शन-पूजनके लिये सुदूर निवासीतक आस्तिक जन लालायित रहा करते हैं। यह क्यों? किसी भी कार्यविशेषके प्रति सोत्साह प्रवृत्तिमें मूल कारण उसमें इष्टसाधनताका सुदृढ़ निश्चय ही होता है।

मुझे बहुत ही प्रसन्नता है कि वर्तमानमें यह काशीविश्वनाथमन्दिर शास्त्रीय मर्यादाकी पूर्ण सुरक्षाके साथ एक भव्य रूपमें आस्तिक जनोंको दर्शनार्थ सुलभ है। इसकी व्यवस्थामें बड़ी ही तत्परतासे लगे हुए आस्तिक महानुभाव अवश्य ही भूतभावन विश्वनाथके विशेष अनुग्रहके पात्र हैं। वर्तमान युगमें जब कि वेद-शास्त्रकी मान्यताओंपर कठोर प्रहार प्रतिक्षण किये जा रहे हैं, काशीविश्वनाथमन्दिरकी शास्त्रीय विधिसे

सुव्यवस्थामें सुदृढ़ रहना विशेष महत्त्वकी बात है।

श्रीअन्नपूर्णाकी प्रतिष्ठा सम्पन्न हो जानेमें श्रीकाशीविश्वनाथमन्दिर अपनेमें सम्पूर्ण हो रहा है। आस्तिकजन अपना प्रेय एवं श्रेय यहाँ दर्शन-पूजनकर प्राप्त करें तथा मन्दिरकी शास्त्रीय मर्यादाको सुरक्षित रखते हुए सच्चे सनातनीके रूपमें अमर सुयशके भागी बनें, यही हमारी सदाशिव एवं पराम्बा अन्नपूर्णाके चरणोंमें प्रार्थना है।

श्रीकाशीविश्वनाथमन्दिरकी उपादेयता

[पण्डितराज आचार्य श्रीकालीप्रसाद मिश्र,
भूतपूर्व अध्यक्ष संस्कृत महाविद्यालय, वाराणसी]

शास्त्रीय मर्यादाकी रक्षाके लिये श्रीविश्वनाथमन्दिर काशीका एक बहुत उच्च स्थान था। लाखों भारतीय धार्मिक जन दर्शनकर आत्मतोष प्राप्त करते थे। समयके प्रवाहमें पड़कर अनेक राजनीतिक दलोंने अस्पृश्योंको प्रोत्साहन देकर मन्दिरमें उनको प्रवेश कराना चाहा।

वर्षों संघर्ष चलनेके बाद जब शास्त्र-मर्यादाभिमानिनी धार्मिक जनताको कुचलकर अस्पृश्योंने मन्दिरमें प्रवेशकर उसे अशुचि बना दिया तो पुनः आस्तिक हिन्दुओंके लिये इसके अतिरिक्त दूसरा मार्ग नहीं था तो उस मन्दिरको दर्शनायोग्य घोषित किया जाय तथा एक स्वतन्त्र काशीविश्वनाथमन्दिरकी स्थापना की जाय।

धर्मारक्षावतार पूज्यपाद स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराजके तत्त्वावधानमें ऐसा ही हुआ। नव मन्दिरकी स्थापना की गयी। अब उस मन्दिरमें भगवती अन्नपूर्णा की प्रतिष्ठा हो रही है, यह जानकर बड़ा ही हर्ष है। धार्मिक जगत् तथा वेद-शास्त्रोंकी मर्यादाकी रक्षाका भी बहुत बड़ा प्रयास है।

'ईशानः सर्वविद्यानाम्'

[ब्रह्मर्षि पं० श्रीपट्टाभिरामजी शास्त्री, मीमांसाकेशरी, शास्त्ररत्नाकर]

अनन्तश्रीविभूषित तपोमूर्ति श्रीकरपात्री स्वामीजी महाराजसे प्रेरित भक्तजनोंने मीरघाट काशीमें विधिपूर्वक विश्वनाथमन्दिर बनाकर उसमें भगवान् विश्वनाथकी नर्मदेश्वरके रूपमें प्रतिष्ठा और वैदिक मार्गसे पूजनादिकी सुव्यवस्था की। वेदोंमें परब्रह्म परतत्त्वका निर्गुण-निराकार और अपरिच्छिन्नरूपमें वर्णन पाया जाता है। इसके साथ ही सगुण-साकार और परिच्छिन्नरूपका भी प्रतिपादन मिलता है। यह यद्यपि विरुद्ध त्रिक्-सा प्रतीयमान है; क्योंकि निर्गुण और सगुण, निराकार और साकार, अपरिच्छिन्न और परिच्छिन्न—ये तीनों द्वन्द्व परस्पर विरोधी हैं तथापि जिन वेदोंमें ये परस्पर विरोधी तत्त्व प्रतिपादित हैं, उन्हींमें विरोधका परिहार भी वर्णित है। वस्तुस्थितिके परिशीलनसे विरोध ही नहीं है। शमीवृक्षके गर्भमें दाहात्मक अग्नि विद्यमान है, किंतु वह निर्गुण है और निराकार है, जबकि हम मन्थन-दण्डसे मन्थन करते हैं तो सगुण-साकार अग्निका आविर्भाव देखते हैं। जलभरे मेघमें तेजस्तत्त्व निर्गुण-निराकार विद्यमान है, मेघोंके संघर्षसे वह सगुण-साकार प्रकट होता है, उसी प्रकार संसारमें सर्वत्र निर्गुण-निराकार परब्रह्म परतत्त्व व्याप्त है, विशेष कार्यकी आवश्यकतासे वह सगुण-साकार और परिच्छिन्न-रूपमें प्रकट हो जाता है। अतः इसमें विरोधका प्रश्न ही नहीं है।

परम पवित्र भारतकी ही यह महिमा है कि वह परब्रह्म तत्त्व विविध रूपोंको धारणकर लोकके निमित्त प्रकट होता है। यह तो निर्विवाद सिद्ध है कि मानव अपने जन्म-कालमें ही पूर्ण विकसित

नहीं रहता किंतु, वह विकासके क्षेत्रोंको अवलम्बितकर क्रमशः विकासमान होता है। वृक्षोंसे फल ही नहीं उत्पन्न होते हैं; अंकुर, पल्लव, कुसुममंजरी आदि क्रमसे ही फल होते हैं। पंचभूतात्मक इस प्रपंचकी स्थितिसे मानवको शिक्षा पाना है। शिक्षाके निमित्तसे ही इस प्रपंचका ईश्वरने निर्माण किया। भारतका ही यह अनुपम क्रम है कि '**गुरोस्तु मौनं व्याख्यानं शिष्यास्तु छिन्नसंशयाः।**' परमेश्वरने मौन रहकर पंचभूतात्मक प्रपंचको रचाया, वह प्रपंच मानवको उपदेश करता है। प्रपंचमें भला-बुरा दोनों होते हैं। कोई भलेको ग्रहण करते हैं तो कोई बुरे को। कौआ अस्पृश्य है, अनियत पदार्थोंका भक्षण करनेवाला है, मलीमस है, लेकिन अपने खानेके समय बन्धुओंको बुलाकर ही खाता है, यह उसका विशेष आचरण है। जंगलमें कुरंग विचरण करता हुआ समयपर तृणोंको चरता है, निद्राके समय निद्रा करता है, चाटुकारिता उसमें नहीं है, विशेष लिप्सासे किसीके पीछे दौड़ता नहीं है, वह न कर्णे-जप है न पिशुन ही। ये उसके गुण हैं। बुद्धिमान् मानवके लिये ये ग्राह्य हैं। इसी प्रकार बक और बिडाल हैं। उनकी वृत्तियाँ बुरी हैं। शास्त्रकारोंने इस दृष्टिसे धर्मके साथ-साथ अधर्मका भी विवेचन किया है कि अधर्मको लोग त्यागें। इसी प्रकार भगवत्-सृष्टिमें उपादेय भी हैं, अनुपादेय भी और हेय भी हैं। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि मानव परमात्माकी सृष्टिसे उपदेशको प्राप्तकर अपने परम लक्ष्यकी प्राप्तिके लिये प्रयत्नशील रहें।

जैसा कि परमेश्वर जंगम पशु-पक्षी आदिकों द्वारा सदुपदेश करता है, उसी प्रकार स्थावर पदार्थोंको भी सर्जनकर उपदेश करता है। शोणभद्रा, गण्डकी, नर्मदा और स्फटिक पर्वत, स्वर्णरेखा पर्वत भारतमें विशिष्ट महत्त्व रखते हैं। शोणभद्रादि नदियों और पर्वतोंसे शिलाएँ उत्पन्न होती हैं। ये शिलाएँ परमेश्वरके रूपमें हैं। इनके पूजनसे मानव अपने चरम लक्ष्यकी प्राप्तिमें अग्रसर होते हैं। यह हमारी चिरन्तन संस्कृति है। इसी सन्दर्भमें अपने इस विश्वनाथमन्दिरमें नर्मदेश्वरकी

प्रतिष्ठाकर भक्तजनोंने अपने पूर्वजन्मके सुकृतका परिचय दिया है। नर्मदेश्वर-शिलामें यह विशेषता है कि इसमें सभी कलाओंसे भगवान् शंकर परिपूर्ण रहते हैं। यह लिंगाकार है। गत्यर्थक 'लिगि' धातुसे 'घञ्', प्रत्ययान्त 'लिंग' शब्दका अर्थ 'ज्ञान' है। अर्थात् लिंग ज्ञानरूप है। परमात्मा शंकर '**ईशानः सर्वविद्यानाम्**' इस श्रुतिसे विद्याओंके अधिष्ठाता हैं। विद्या ही ज्ञान है। अतएव काशीमें ज्ञानरूपी ज्ञानप्रद होकर शंकर विराजमान हैं। आराधनासे तुष्ट होकर भगवान् अन्तमें ज्ञानोपदेशकर प्राणियोंका उद्धार करते हैं। भगवान् शंकर आशुतोष हैं और शिव निर्गुण-निराकार। यह शिव '**शिवः शक्त्या युक्तो यदि भवति**' इस भगवत्पादके कथनानुसार शक्तिसे समन्वित होकर सगुण-साकार बनकर प्राणियोंका उद्धार करते हैं। प्रकृत मन्दिरमें केवल शिवकी ही अभी प्रतिष्ठा है, शक्तिके साथ उसका रहना आवश्यक समझकर भक्तजन अन्नपूर्णाकी भी प्रतिष्ठा करनेवाले हैं। यह अत्यन्त ही स्तुत्य कार्य है। शक्ति-समवेत भगवान् श्रीविश्वनाथ भक्तजनों, दर्शकों, पूजकोंके मनोरथोंकी पूर्ति करें।

सनातन मूल्योंका प्रतीक—श्रीकाशीविश्वनाथमन्दिर

[विद्वत्-शिरोमणि श्रीमार्कण्डेयजी ब्रह्मचारी]

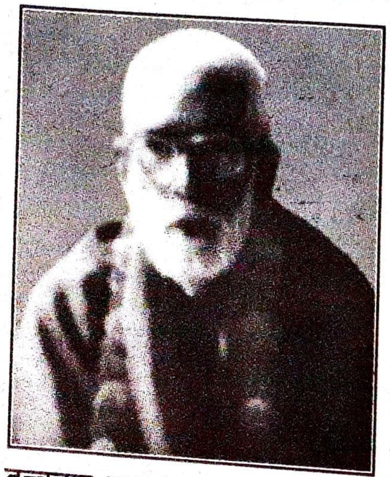

वाराणसीका महत्त्व शास्त्रोंने खुले हृदयसे वर्णन किया है। भगवान् भूतभावन विश्वनाथका कहना है कि वाराणसी पुरी हमारा परम रहस्यभूत स्थान है—

'परं गुह्यतमं क्षेत्रं मम वाराणसी पुरी'

(कूर्मपुराण १।२९।२२)

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, वर्णसंकर, स्त्रियाँ, म्लेच्छ, कीट, पिपीलिकादिक सभी यहाँ मरकर तत्त्वज्ञान प्राप्तकर चन्द्रमौलि महावृषभवाहन शिव हो जाते हैं—

ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्रा ये वर्णसंकराः।
स्त्रियो म्लेच्छाश्च ये चान्ये संकीर्णाः पापयोनयः॥
कीटाः पिपीलिकाश्चैव ये चान्ये मृगपक्षिणः।
कालेन निधनं प्राप्ताः अविमुक्ते वरानने॥
चन्द्रार्धमौलयस्त्र्यक्षा महावृषभवाहनाः।
शिवे मम पुरे देवि जायन्ते तत्र मानवाः॥

(कूर्मपुराण १।२९।३१—३३)

यहाँ मरनेपर किसी पापीको भी नरक-प्राप्ति नहीं होती—

'नाविमुक्ते मृतः कश्चिन्नरकं याति किल्बिषी।'

यहाँ भूमिमें, जलमें, आकाशमें—कहीं भी मरनेपर; सर्प, अग्नि, डाकू, बिजलीसे किसी भी प्रकार मरनेपर दुर्मरण-दोष न होकर प्राणिमात्र मुक्ति प्राप्त करता है। सूईकी नोक बराबर भी कोई स्थान यहाँ ऐसा नहीं है, जहाँ मरनेपर मुक्ति न होती हो—

सूच्यग्रमात्रमपि नास्ति ममास्पदेऽस्मिन्
स्थानं सुरैश्च विमृतस्य न यत्र मुक्तिः।
भूमौ जले वियति वा भुवि मध्यतो वा
सर्पाग्निदस्युपविभिर्निहितस्य जन्तोः॥

(पद्मपुराण)

अन्य क्षेत्रोंमें साधना करनेपर सम्भव है मुक्ति न हो, कुछ विकलता रह जाय, किंतु काशीमें साधना करनेपर जो कुछ त्रुटि रह जाती है, वह काशीकी महिमासे पूर्ण हो जाती है—

अन्यत्र साधुसुकृतैः कृतैर्मुच्यते वा न वा।
अत्र साधनवैकल्ये काशी पूर्णप्रकल्पयेत्॥

काशीमें मृत्यु-प्राप्तिके विषयमें न तो उत्तरायण-दक्षिणायन-कालका कोई विशेष महत्त्व है और न तो देशका ही। काशीखण्डका वचन है—

उत्तरं दक्षिणं वापि अयनं न विचारयेत्।
सर्वोऽप्यस्य शुभः कालो ह्यविमुक्ते प्रिये यतः॥

तथा सनत्कुमार-संहिताका वचन है—

रथ्यान्तरे मूत्रपुरीषमध्ये
चाण्डालवेश्मन्यथवा श्मशाने।
कृतप्रयत्नोऽप्यकृतप्रयत्नो
देहावसाने लभतेऽत्र मोक्षम्॥

अर्थात् मूत्र-पुरीषादिसे अपवित्र गलियोंमें, चाण्डालके घरमें, श्मशानमें, कहीं भी काशीमें शरीर छूटे; कोई मुक्तिके लिये प्रयत्न करे अथवा न करे, प्रत्येक अवस्थामें यहाँ मरनेपर मुक्ति-प्राप्ति होती है।

काशीकी महिमा वर्णन करते शास्त्र अघाते नहीं हैं। भगवान् विश्वनाथको काशी अति प्रिय है। वे इसे कभी भी नहीं छोड़ते। इसलिये इसका नाम अविमुक्त है। काशीके साथ ही भगवान् विश्वनाथका

नाम जुड़ा हुआ है। भारतीय जनताके लिये, चाहे वह देशके किसी कोनेमें हो, काशी-यात्रा अनिवार्य बन गयी। देश-विदेशके यात्री प्राय: यहाँ आया करते हैं और भगवान् विश्वनाथके दर्शनकर अपनेको कृतकृत्य मानते हैं।

जैसे काशीके साथ भगवान् विश्वनाथके मन्दिरका नाम जुड़ा है, वैसे ही विश्वनाथमन्दिरके साथ सनातन धर्ममंचके मनस्वी नायक अभिनव शंकराचार्य यज्ञ-युगप्रवर्तक मनीषी परम पूज्य गुरुदेव श्रीस्वामी करपात्रीजी (श्रीस्वामी हरिहरानन्दसरस्वती) महाराजका स्वर्णाक्षरोंसे अंकित नाम जुड़ा रहेगा और इतिहासकार उसका वर्णन करेंगे।

परमपूज्य गुरुदेव श्रीस्वामी करपात्रीजी महाराज अपनी जिन अमर कृतियोंके कारण भारतीय जनमानसमें आलोकित होते रहेंगे, उनमेंसे नये काशीविश्वनाथ मन्दिरकी स्थापना भी एक है। यह श्रीकाशीविश्वनाथ-मन्दिरकी स्थापना निश्चित ही भारतीय आस्था तथा भारतीय आध्यात्मिक जीवनके उच्च स्तरोंकी रक्षाका एक सुदृढ़ प्रतीक है। पूज्य स्वामीजी महाराजके पूर्ववर्ती धर्मरक्षाके लिये बद्ध-परिकर आचार्योंको सदा ही किसी-न-किसी रूपमें शासकीय सहायता उपलब्ध होती रही है। फलत: उन आचार्योंको अपने-अपने समयमें उतनी प्रतिकूलताका सामना नहीं करना पड़ा, जितना पूज्य चरणोंको करना पड़ा है।

स्वतन्त्रता-प्राप्तिके पश्चात् सनातन-धर्मपर सरकारी स्तरपर जितना आघात किया गया, उतना सम्भवत: 'अपना राज्य' कहे जानेवाले किसी भी देशमें नहीं किया गया। वर्ण-व्यवस्थाके पवित्र आधारोंको घृणाकी भावभूमिपर खड़ा करनेका प्रयास किया गया। इसी कुत्सित प्रयासकी परम्परामें काशीविश्वनाथमन्दिरमें बलात् हरिजनोंके प्रवेश करानेकी भी घटना है। भारतमें सभी वर्णोंके लोग श्रद्धा-भक्तिके साथ अपने देवताओंका मन्दिरोंमें दर्शन किया करते थे। मन्दिरोंकी मर्यादाकी रक्षा सदा की जाती थी। आर्य-संस्कृतिके मूल स्तम्भोंको नष्ट करनेके लिये

कृतसंकल्प भारत-सरकारने वर्णोंमें भी भेद पैदा करनेकी नीति अपनायी। हरिजनोंका मत प्राप्त करनेके लिये उन्हें उन कार्योंको करनेके लिये उकसाया गया, जिन्हें वे स्वयं नहीं करना चाहते थे। सरकारने अपने इस कृत्यद्वारा धर्म तथा परम्पराको विशृंखलित करना प्रारम्भ कर दिया। धर्मनिरपेक्षता तथा अस्पृश्यता-निवारणके नामपर राजनीतिक स्वार्थसिद्धिके लिये आर्य-परम्पराका विनष्टीकरण प्रारम्भ किया गया।

सनातन-धर्मके ऊपर हो रहे इन कुत्सित आघातोंसे पूज्य श्रीस्वामीजी महाराज व्यग्र हो उठे। उन्होंने भारतीय शासकोंसे धार्मिक क्षेत्रमें गन्दी राजनीतिक गतिविधि बन्द करनेका आग्रह किया, परंतु उनकी इस बातका सरकारी स्तरपर गलत प्रचार किया गया। पूज्य स्वामीजी महाराज भारतीय धर्म तथा संस्कृतिकी रक्षाके लिये आगे बढ़े। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि मन्दिरमें हरिजनोंका प्रवेश किसी गलत भावसे नहीं रोका जा रहा है। मन्दिरकी मर्यादाकी रक्षाके साथ-साथ हरिजन एवं अन्य वर्गके लोग भी भगवान्का दर्शन उसी प्रकार कर सकते हैं, जिस प्रकार वे पहलेसे करते आये हैं, परंतु मर्यादाको नष्ट करनेपर उतारू सरकारने एक न सुनी। अन्ततोगत्वा श्रीस्वामीजीको संघर्षका आह्वान करनेके लिये बाध्य होना पड़ा। जनताने उनका साथ दिया, पर सरकारी स्तरपर स्वामीजीके मार्गमें पग-पगपर बाधा डाली गयी और स्वामीजीपर अन्य आरोप लगाकर अपनी कही जानेवाली सरकारद्वारा उन्हें जेलमें बन्द कर दिया गया। मुझे लगभग ३ दशकोंतक अनवरत स्वामीजीका सांनिध्य प्राप्त हुआ है। जेलोंमें भी और बाहर भी, सदा ही मैंने यह देखा कि धर्मरक्षा-शास्त्ररक्षाके लिये उत्तरोत्तर अदम्य उत्साह स्वामीजीमें बढ़ता ही रहता है। परंतु आन्दोलनकी परिसमाप्ति नहीं हुई। सरकार मन्दिरकी मर्यादा भंगकर सदाके लिये हिन्दू जनमानसको विभक्त करनेके अपने दु:संकल्पपर अडिग थी। उसने मन्दिरकी मर्यादा भंग करनेका प्रयास बनाये रखा। पूज्य श्रीस्वामी करपात्रीजी महाराज

शास्त्रीय मर्यादाओं एवं सनातनी मान्यताओंको किसी भी स्तरपर गिरावटके विन्दुपर जानेसे बचाना चाहते थे। अतः उन्होंने शासकीय शक्तियोंद्वारा धार्मिक परम्परापर प्रहारको प्रभावहीन करनेके लिये काशीमें नये विश्वनाथमन्दिरकी स्थापनाका निश्चय किया।

शास्त्रीय मर्यादा, वैदिक परम्परा, धार्मिक मूल्य तथा आध्यात्मिकता एवं नैतिकताकी सतत सुरक्षाके लिये कठिन, विषम, विपरीत परिस्थितिमें यही एक प्रयास सम्भव हो सकता था। नर्मदाजी भेड़ाघाट (बाणकुण्ड)-से स्वयं जाकर श्रीस्वामीजी महाराज बाणलिंग लाये और मीरघाटपर नये काशीविश्वनाथकी स्थापना हो गयी। इस तरह सनातन धर्मके प्रमुख सिद्धान्तको स्वामीजी महाराजने निश्चित धरातल प्रदान किया।

आज अपनी समस्त वैदिक परम्पराओंके साथ काशीविश्वनाथमन्दिर भारतीय जन-मानसकी शाश्वत श्रद्धाका केन्द्र बना हुआ है। महापुरुषोंके कार्य-कलाप सम-सामयिक तथा भावी पीढ़ियोंको जाज्वल्यमान किया करते हैं। आज सनातनी जनता अपने चारों ओरसे एक विचित्र ज्वालासे अपने-आपको घिरी होनेका अनुभव कर रही है; जिसकी समस्त धार्मिक परम्पराओं, आदर्शों तथा आधारोंको जलानेका कुत्सित प्रयास किया जा रहा है। वह इस काशीविश्वनाथमन्दिर और उसके संस्थापक अभिनव शंकराचार्य श्रीस्वामी करपात्रीजी महाराजको अपना रक्षक समझकर उधर बढ़ रही है। धार्मिक मर्यादाओं, शास्त्रीय परम्पराओंकी रक्षासे ही सनातनी किंबहुना आस्तिक जनमानसका कल्याण सम्भव है। इसीलिये पूज्य श्रीस्वामीजी महाराजने मन्दिरकी व्यवस्था उत्साही, उदार तथा धार्मिक परम्पराओंकी रक्षामें निरत लोगोंके हाथमें सौंपी है। ये लोग अपने गहन उत्तरदायित्वका सफलतापूर्वक निर्वाह कर रहे हैं। इन लोगोंके कुशल निर्देशनसे चलनेवाली व्यवस्था पूज्य स्वामीजी महाराजकी सनातनधर्म मर्यादाकी रक्षाका संकल्प पूरा कर रही है। नया काशीविश्वनाथमन्दिर अपने समस्त वैभवके साथ सनातन जगत्की

आशाका एकमात्र केन्द्र बना हुआ है।

आशुतोष भूतभावन भगवान् विश्वनाथकी उपासनाके अनेक प्रकार हो सकते हैं। अपनी छोटी-बड़ी प्रत्येक उपासनासे अतिशीघ्र आराधकोंका मनोरथ पूर्ण करनेवाले भगवान् विश्वनाथके सन्निधानसे थोड़ा भी किया हुआ पुण्य अनन्त हो जाता है और काशीकी महिमासे कर्मगत वैगुण्य समाप्तप्राय हो जाता है। इसलिये अनेक भक्तजन काशीविश्वनाथमन्दिरमें अपना जप-अनुष्ठान आदि सम्पादनकर कामना-प्राप्ति कर रहे हैं। इस तरह यह मन्दिर एक धार्मिक पारम्परिक केन्द्र बन गया है। यह मन्दिर हिन्दुत्व, वैदिक परम्परा और सनातनी मूल्योंकी रक्षाके लिये सदा जागरूक, निर्भय प्रहरी, महामनीषी, विश्ववन्द्य श्रीस्वामी करपात्रीजी महाराजके सत्प्रयासका सजीव प्रतीक है। आज सनातनी जगत्में हुए पुनर्जागरणसे पूज्य स्वामी करपात्रीजीकी विचारधारा साकार होती जा रही है। आस्तिक जनता तथा भावी पीढ़ी सतत जागरूक महामनीषी श्रीस्वामी करपात्रीजी महाराजके इस महान् प्रयासके लिये सतत ऋणी रहेगी।

काशीविश्वनाथकी स्थापनासे शास्त्रमर्यादा सुरक्षित

[श्रीसीतारामजी कविराज, श्रीविद्याभास्कर]

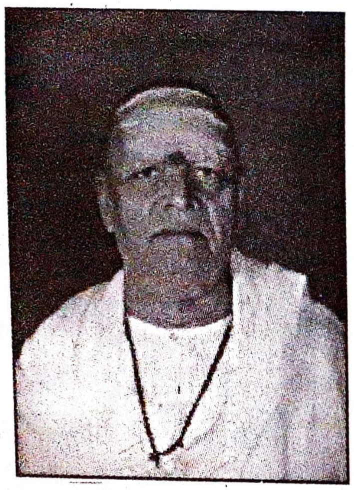

आनन्दवन त्रिकंटकविराजित त्रैलोक्यविलक्षण अविमुक्त वाराणसी क्षेत्रमें कलिमलमथनी सद्यःपापपहारिणी निलिम्पनिर्झरी पुण्यसलिला भगवती भागीरथीके परम पावन तटपर विराजमान, सुदीर्घकालतक सतत प्रयत्न करनेपर भी योगीन्द्र-मुनीन्द्रोंको भी सुदुर्लभ मुक्तिके प्रदाता भगवान् सदाशिव श्रीविश्वनाथके नव मन्दिरमें श्रीगणपति, पराम्बा अन्नपूर्णा, राधा, माधव, श्रीसीता, राम, लक्ष्मणकी मूर्तियाँ स्थापित हैं।

आशुतोष भगवान् विश्वनाथ अव्यक्त रूपसे काशीके कण-कणमें विराजमान हैं। संसारके कल्याणके लिये लिंगरूपमें स्वतः प्रकट होकर अथवा शास्त्रविधानसे स्थापित लिंगमें भी विशेष रूपसे सन्निधि करके भक्तोंको अपनी अर्चा-पूजाका शुभ अवसर प्रदान करते हैं। वाराणसीमें कई मुख्य लिंगोंके होनेका इतिहास प्राप्त होता है, उनमें श्रीविश्वनाथलिंग ही सबसे प्रधान एवं प्रसिद्ध है।

काशीखण्डके अनुसार विश्वनाथलिंग काशीमें एक निश्चित स्थानपर स्थापित था, परंतु कालवशात् उसके लुप्त हो जानेसे शास्त्रविश्वासी आस्तिकोंने कालान्तरमें पुनः श्रीविश्वनाथके नामसे दूसरे लिंगकी स्थापना की और इस प्रकार लिंगान्तर-स्थापनाका क्रम निरन्तर चलता रहा। जब-जब विधर्मियोंने बलपूर्वक पूर्वस्थापित लिंगकी शास्त्रीय मर्यादा नष्ट की, तब-तब विभिन्न स्थानोंमें शास्त्रीय विधिसे लिंगान्तरकी स्थापना कर दी गयी।

काशीविश्वनाथके पुराने मन्दिरमें शास्त्रीय मर्यादाका अतिक्रमण होनेपर धर्मरक्षावतार अनन्तश्री स्वामीकरपात्रीजी महाराजके नेतृत्वमें काशी विद्वत्-परिषद्के तत्त्वावधानमें नवीन काशीविश्वनाथमन्दिरकी स्थापना हुई, जिससे भारतवासियों एवं आस्तिक जनोंके कल्याणका मार्ग प्रशस्त हुआ है।

आज इस मंगल वेलामें उन सभी महाविभूतियोंके प्रति हम आभार प्रकट करते हैं; जिन्होंने आस्तिक जनताके शास्त्रविश्वासरक्षणके लिये यह सफल प्रयत्न किया।

जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्रीकृष्णबोधाश्रमजी महाराजको हम श्रद्धांजलि समर्पण करते हैं, जिनकी केवल इसी कार्यमें नहीं, अपितु स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराजद्वारा संचालित सम्पूर्ण कार्योंमें जप, तप, ज्ञान, विज्ञानके द्वारा सत्प्रेरणा रही, आज भी उनकी आत्मा हमारे समस्त कार्योंमें सहायक है। उन महाविभूतिको हम चिरकालतक नहीं भुला सकते हैं।

इस कराल कलिकालके प्रचण्ड ताण्डवमें समस्त शास्त्रीय मर्यादा, जप, तप, धर्म, कर्म नष्ट-भ्रष्ट होते जा रहे हैं, ऐसे भयानक कालमें भी जनताका जिससे परित्राण हो सके, उस धर्म और शास्त्रोंकी रक्षाके लिये अनवरत प्रयास करते हुए धर्मरक्षावतार स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराजके संकल्पोंका ही साकार रूप यह समस्त क्रिया-कलाप है, इनसे धार्मिक जनताको बहुत बड़ा अवलम्बन एवं परित्राण मिला है और भविष्यमें भी विशेष रूपसे मिलेगा। आपने वेदोंपर भाष्य लिखा है, जिससे शास्त्ररक्षाके लिये हमलोगोंको बहुत बड़ा बल मिलेगा।

आद्य शंकराचार्यने धर्मरक्षा और शास्त्ररक्षाका ही कार्य किया था, वेदोंपर भाष्य लिखना—यह कार्य अवशिष्ट रह गया था, इसे पूरा करनेके लिये ये अभिनव शंकररूपमें अवतरित हुए। इनके कार्योंका भविष्य मूल्यांकन करेगा, वर्तमानके लिये तो श्रीमद्भागवतके शब्दोंमें यही कहा जा सकता है कि—

दुर्भगो बत लोकोऽयं......। इन प्रातःस्मरणीय चरणोंमें सतत भावसुमनांजलि समर्पित करना अपना सौभाग्य समझता हूँ।

विश्वनाथ महादेव

[प्राणाचार्य कविराज श्रीहरिवक्षजी जोशी, काव्यसांख्यस्मृतितीर्थ]

भारतवर्षके प्राचीन महर्षियोंने तैंतीस तथा तैंतीस कोटि देवोंको अपने तप:पूत नेत्रोंसे देखकर उनमें पाँच देवोंको सबसे प्रधान मानकर उनकी उपासनाको श्रेष्ठता प्रदान की। उनके नाम हैं—महाविष्णु-महेश-गणेश-शक्ति (दुर्गा), सूर्य। फिर भी उनमें तर-तम भावकी कल्पना की तो उनमें सबसे प्रधान आशुतोष सदाशिव औढ़रदानी देव भोलानाथ शंकरको ही महादेव या विश्वनाथकी उपाधिसे विभूषित किया। सूक्ष्म दृष्टिसे विचार करनेपर यह स्पष्ट हो जाता है कि शंकरको ही महादेव या विश्वनाथ मानना उनके गुणोंके आधारपर भी युक्तियुक्त है।

उनका प्रथम सर्वप्रिय गुण तो शीघ्र प्रसन्न होनेका है। इसका प्रधान कारण है—उनकी पूजामें बहुत द्रव्यव्ययसाध्य आडम्बरपूर्ण पूजा-सामग्रीकी आवश्यकता नहीं है। इसीलिये किसी निर्धन शिवभक्तने उनकी प्रशंसा करते हुए कहा—

मूर्तिमृदा विल्वदलेन पूजाऽप्रयाससाध्यं वदनञ्च वाद्यम्।
फलं च यद्यन्मनसाभिकांक्ष्यं विश्वस्य विश्वेश्वर एव देवः॥

शिवमूर्ति बनानेमें स्वर्ण या अष्टधातुओंकी आवश्यकता नहीं, शुद्ध मिट्टीसे उनकी मूर्ति बना लो, बेलपत्र चढ़ाकर एक लोटा पानी डाल दो। आरतीमें घण्टा-घड़ियालकी आवश्यकता नहीं; बिना प्रयास ही गाल फुलाकर अपनी हथेलीकी थपकी मारकर बम्-बम् या बल्-बल्की आवाज कर दी, बस हो गयी आरती, फिर यह सोचो कि इस सस्ती पूजासे फल भी कोई सस्ता या साधारण होगा, फल जो मनसे चाहो सो ही मिलेगा, इसलिये नि:स्व (धनरहित) दरिद्रोंका परमपूज्य देव विश्वेश्वर ही है।

शिव केवल त्रिभुवनमें भोगनेयोग्य स्वाराज्य-साम्राज्य-स्वर्गराज्यका फल देनेवाले ही देव नहीं, अपितु परम पुरुषार्थरूप मोक्षके भी दाता हैं। नदी तथा सागरको पार करनेवाले केवट अपनी नौकाको पैरोंके नीचे रखते हैं। अत: पार जानेकी इच्छावाले यात्रीको नजदीक पहुँचनेपर ही पार

करनेवाली नौकाके दर्शन होते हैं, पर यह केवट तो अपने सिरपर अर्धचन्द्राकार नौका लिये भवसागरके किनारे खड़ा दूरसे ही यात्रियोंको अपनी नौकाका दर्शन कराता रहता है, जिससे भवसागर-पारगामी यात्रीको केवट और नौका ढूँढ़नेका प्रयास न करना पड़े—

आक्रन्दमिन्दुधर धारय देव कर्णे
कस्त्वत्परः परमकारणकर्णधारः।
मूर्ध्ना वहन्नुडुपखण्डमखण्डपुण्यम्
कं कं न तारयसि संसृतिसागराद्यः॥

हे इन्दुधर! मेरे इस आक्रन्द—घबराहटपूर्ण चिल्लाहटको अपने कानमें स्थान दीजिये अर्थात् सुनिये। हे परमकारण! आपके अतिरिक्त कौन कर्णधार है, जो संसारसागरसे पार कर सकता है, आप अखण्ड पवित्र अर्धचन्द्ररूप नौकाको सिरपर धारण करते हैं। कौन ऐसा पुरुष है, जिसे आपने संसारसागरसे पार नहीं किया!

इन्हीं विश्वनाथदेवका नवीन मन्दिर तपोमूर्ति सनातन जगत्के हृदयसम्राट् स्वामी करपात्रीजी सरस्वतीकी प्रेरणासे कई वर्ष पहले वाराणसीमें स्थापित हुआ। विश्वनाथकी प्राणप्रतिष्ठा शास्त्रीय विधिसे हो चुकी। शास्त्रीय विधिसे प्रतिदिन पूजा होती है। अब अन्य विष्णु आदि देवोंकी उसी मन्दिरमें प्रतिष्ठा होनेवाली है। शास्त्रानुयायी भक्तोंके लिये यह परम सौभाग्यका विषय है। भक्तगण दर्शन-पूजन-प्रार्थना करके अपना जन्म सफल बनायें।

नवीन श्रीकाशीविश्वनाथमन्दिर

[श्रीसीतारामजी खेमका, संस्थापक-प्रबन्धक एवं सचिव,
नवीन श्रीकाशीविश्वनाथमन्दिर, वाराणसी]

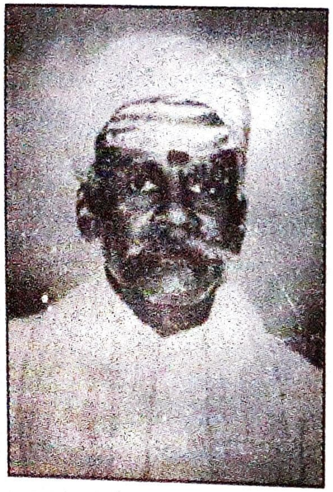

भारत एक अध्यात्मप्रधान देश है, जहाँ ऋषि-महर्षि तथा सन्त-महात्माओंका प्राकट्य तो होता ही रहा है, साथ ही स्वयं प्रभु-परमात्मा भी समय-समयपर अवतार ग्रहण करते हैं। वेद और शास्त्र यहाँकी परम निधि हैं, जिनसे व्यक्तिको साधनाका आधार प्राप्त होता है और वह व्यक्ति सामान्य जीवन-यापनकी अपेक्षा कुछ गम्भीर चिन्तनकी ओर अग्रसर होने लगता है।

भारतीय शास्त्रोंकी यह विशेषता है कि वे मानवका ही नहीं, बल्कि प्राणिमात्रका हित-चिन्तन करते हैं। साथ ही मनुष्य-जीवन प्राप्त करनेवालोंको उनकी शक्ति-सामर्थ्य एवं अधिकारानुसार, उनके कर्तव्य कार्योंका मार्गदर्शन भी कराते हैं। यही कारण है कि भारतीय साधक अपने कर्तव्यका पालन मनमाने रूपमें अपने इच्छानुसार नहीं करता, बल्कि शास्त्राज्ञाके ही आधारपर करता है। शास्त्रजीवनके प्रत्येक पहलूपर चिन्तन करता है तथा मार्गदर्शन भी करता है। यदि हम इस लोकके आगेकी बात सोचते हैं तो हमें अपने शास्त्रोंपर विश्वासकर उन्हें आधार मानना ही पड़ेगा।

परमतत्त्वकी प्राप्तिके लिये काशी सृष्टिका सर्वश्रेष्ठ स्थान माना जाता है, जो भगवान् विश्वेश्वरकी राजधानी है। यहाँ भूतभावन भगवान् विश्वनाथका अमोघ दर्शन एवं पुण्यसलिला भागीरथी गंगाका पवित्र अवगाहन प्राप्तकर मनुष्य अपनेको कृतकृत्य करता है। उसकी साधनाका भी मार्ग प्रशस्त होने लगता है। वह भौतिक जगत्की बाह्यवृत्तियोंसे

विमुख होकर आत्म-चिन्तनमें अग्रसर होने लगता है, पर यह सब अनुष्ठानकी सफलता शास्त्र-विधिसे ही सम्भव है।

काशीमें नये विश्वनाथ-मन्दिरकी स्थापना शास्त्र-मर्यादाको सुरक्षित रखनेकी ओर एक कदम है। अनन्तश्री स्वामी करपात्रीजी महाराज, जिनका जीवन धर्मरक्षाके लिये ही अर्पित है, उन्होंने वर्णाश्रम-व्यवस्थाको दृष्टिगत रखते हुए सभी वर्णके लोगोंको भगवान्के दर्शनका समान अधिकार प्राप्त हो जाय, साथ ही शास्त्रानुसार देवार्चन एवं प्राण-प्रतिष्ठामें कोई बाधा उत्पन्न न हो, इसके लिये यह आवश्यक समझा कि सभी दर्शनार्थी गर्भमन्दिरसे बाहर प्रांगणमें खड़े होकर भगवान् विश्वेश्वरका दर्शन करें तथा अपने भावानुसार भगवान्की अर्चा-पूजा मन्दिरके अधिकृत पुजारियोंद्वारा करायी जा सके। इसी निमित्त नये मन्दिरका निर्माण हुआ और भगवान् विश्वेश्वरकी स्थापना हुई, जो पूरे भारतवर्षमें सनातन धर्मके अनुयायियोंके लिये एक आदर्श रूपमें उपस्थित है।

इस कलिकालमें जो भी सार्वजनिक मन्दिर हैं, वहाँ दर्शन आदिकी व्यवस्था इसी प्रकार होनी चाहिये, जिससे मन्दिरोंकी मर्यादा भी सुरक्षित रह सके तथा सरकारी कानूनोंकी भी रक्षा हो सके।

नवीन काशीविश्वनाथमन्दिरमें चारों साधन एक साथ सुलभ

[श्रीराधेश्यामजी खेमका, एम०ए०, साहित्यरत्न, काशी]

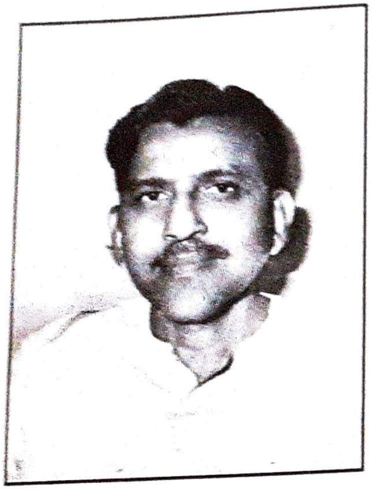

भारतवर्षमें काशीकी अपार महिमा है। सम्पूर्ण जगत्‌में यही एक स्थान है, जहाँ स्वयं भूतभावन भगवान् विश्वनाथ प्राणीको अन्तिम समयमें तारक मन्त्र प्रदानकर जन्म-मरणके बन्धनसे मुक्त कर देते हैं तथा प्राणी अनन्तमें समाहित हो परम शान्तिको प्राप्त होता है। इसीलिये सन्त-महात्माओंने यह कहा है कि इस असार संसारमें केवल चार ही बातें सारभूत हैं—

असारे खलु संसारे सारमेव चतुष्टयम्।
गङ्गाम्भः सतां सङ्गः काश्यां वासः शिवार्चनम्॥

गंगाका जल, साधुजनोंका संग, काशीका निवास एवं आशुतोष भगवान् शिवका अर्चन—ये चार बातें एक स्थानपर यदि प्राप्त हो सकती हैं तो केवल काशीमें ही प्राप्त हो सकती हैं। गंगाका एक बिन्दु जल मनुष्य-जीवनको पवित्र करता है। साधु-पुरुषोंद्वारा निमेषभरका सत्संग जीवनमें महान् परिवर्तन ला देता है। काशीमें क्षणभरका निवास जन्म-जन्मान्तरमें किये गये पापोंका नाश करता है—**'अन्यदेशे कृतं पापं वाराणस्यां विनश्यति'**। और भूतभावन भगवान् विश्वनाथका अर्चन जन्म-जन्मान्तरमें की गयी साधनाओंको सार्थक बनाता है।

—ये चार बातें चमत्कारिक तो अवश्य हैं, पर यह चमत्कार सार्थक तभी होता है, जब इसका अनुष्ठान शास्त्रोंद्वारा प्रतिपादित नियमानुसार सम्पादित किया जाय। श्रीकाशीमें गंगाके पवित्र-तटपर भगवान् विश्वनाथके

नवीन मन्दिरकी स्थापना हुई है, जहाँ शास्त्र-मर्यादा एवं विधिपूर्वक भगवान् विश्वेश्वरके अर्चन-पूजनकी व्यवस्था है। प्रातःकाल ३ बजेसे रात्रि ११ बजे पर्यन्त भगवान्‌की सात आरतियाँ होती हैं। गंगाजलका अखण्ड अभिषेक चलता है, सन्त-महात्माओंकी कथा एवं सत्संगका अनवरत प्रवाह चलता है। इस प्रकार काशीमें यह एक ऐसा स्थान है, जहाँ चारों सारभूत बातें एक ही स्थानपर प्राप्त हैं।

'गङ्गाम्भः सतां संगः काश्यां वासः शिवार्चनम्।'

नवीन काशीविश्वनाथमन्दिर ईश्वरेच्छाका प्रतीक

[श्रीबाबूलाल गनेड़ीवाला, कलकत्ता]

नवीन विश्वनाथमन्दिर धार्मिक जगत्‌की विशेष घटना है। समस्त ब्रह्माण्डमें जो कुछ भी घटना होती है, वह अखिल ब्रह्माण्डनायक जगन्नियन्ता जगदीश्वरकी इच्छासे ही होती है। इस नवीन विश्वनाथ-मन्दिरके निर्माणका निर्णय तपःपूत, सन्त, महात्मा, धर्मशास्त्रोंके पारंगत विद्वानोंके द्वारा त्रैलोक्यविलक्षण परम पवित्रस्थली वाराणसी नगरीमें हुआ तो इसको जगन्नियन्ताकी प्रबल इच्छा ही मानना पड़ेगा।

भगवान्‌की सबसे बड़ी सेवा उनकी आज्ञाका पालन करना ही है। वेद-शास्त्र भगवान्‌की आज्ञा है, उसका जो उल्लंघन करता है, वह भगवान्‌का आत्मीय कदापि नहीं हो सकता। यह भगवान्‌ने स्वयं कहा है—

श्रुतिस्मृती ममैवाज्ञे यस्त उल्लंघ्य वर्तते।
आज्ञोच्छेदी ममद्रोही मद्भक्तोऽपि न वैष्णवः॥

हमलोगोंके लौकिक व्यवहारमें भी यह देखा जाता है कि किसी व्यक्तिका खूब समादर करो, माला पहनाओ और उसकी आज्ञाका पालन न करो तो क्या वह व्यक्ति प्रसन्न होगा? कदापि नहीं। इसी तरह शास्त्र-विधान-मान्यता ही भगवान्‌की सर्वाधिक श्रेष्ठ सेवा है। इसीसे भगवान् शीघ्र प्रसन्न होते हैं। यही बात आचार्यचरण श्रीस्वामी करपात्रीजी महाराज कहते हैं—व्यष्टि और समष्टिका कल्याण शास्त्राज्ञा-पालनसे ही हो सकता है।

यहाँ एक बात कह देना मैं आवश्यक समझता हूँ कि इस नवीन मन्दिर-निर्माणके लिये मूर्ति-स्थापनाके समय कलकत्तेके धनीमानी सज्जनोंने बहुत कुछ आर्थिक सहयोग दिया था, परंतु वह निर्माणके लिये पर्याप्त नहीं था तो भी

निर्माणकी चेष्टा चल रही थी, समय अबाध गतिसे बीता जा रहा था, मन्दिर-निर्माणमें विलम्ब सभीको खटकने लगा। एक दिन मैं श्रीस्वामी-चरणोंमें बैठा था और उनसे मैंने कहा—महाराज, विश्वनाथजीका मन्दिर नहीं बन रहा है तो उन्होंने कहा कि धार्मिक कार्योंके लिये प्रयत्न करना चाहिये और कार्य यदि पूरा न भी हो तो उस कार्यका फल प्रयत्न करनेवालेको मिल जाता है और कहा कि निरुत्साह नहीं होना चाहिये और यह श्लोक सुनाया—

धर्मकार्ये यतन् शक्त्या यदि नाप्नोति तत्फलम्।
प्राप्तो भवति तत्पुण्यं अत्र मे नास्ति संशयः॥

इस तरह श्रीचरणोंका शुभाशीर्वाद प्राप्त हुआ। भगवान् विश्वनाथकी परम कृपा हुई, मन्दिर-निर्माणके लिये चमत्कारिक रूपसे अर्थकी प्राप्ति होने लगी। स्व० रामाकिसनजी धानुकाने बहुत बड़ा सहयोग दिया और उस अर्थके व्यवस्थित रूपसे व्ययकी व्यवस्था हो, इसके लिये भगवान् विश्वनाथने भवन-निर्माण-कलामें निपुण श्रीआत्मारामजी लोहिया लक्ष्मणगढ़ निवासीपर अहैतुकी कृपा कर दी और उन्होंने अपने कार्यको छोड़कर कारीगरोंको साथमें ले जाकर कई दिनोंतक वहाँ रहकर इस मन्दिरका निर्माण करवा दिया। तदनन्तर अर्चापूजाके प्रतिदिन स्वार्थके लिये एक प्रबन्ध-समितिका निर्माण हुआ, जिसकी बागडोर परम आस्तिक श्रीहनुमानप्रसादजी धानुकाने सँभाली, मुझे भी सेवाका सौभाग्य प्राप्त हुआ और इस कार्यमें हमारे सभी मित्रों एवं आस्तिक जनताने पूर्ण सहयोग दिया, जिसमें श्रीगौरीशंकर बाजोरियाका नाम विशेष उल्लेखनीय है। इस प्रकार श्रीधानुकाजीका सम्बल और मित्रोंके पूर्ण सहयोगसे मन्दिर-निर्माण-कार्य सम्पन्न हुआ और अर्चन-पूजनके लिये एक स्थायी कोष बन गया, जिसकी आयसे यह कार्य-संचालन हो रहा है। इस प्रकार सत्कार्यके संकल्पको भगवान् स्वयं पूर्ण करते हैं। अब इस नये मन्दिरमें माता अन्नपूर्णा, श्रीगणेश आदि देवोंकी भी प्रतिष्ठा हो रही है। इस शुभ अवसरपर आशुतोष भगवान् भूतभावन विश्वनाथके चरणोंमें श्रद्धांजलि समर्पण करता हुआ सभी आस्तिक बन्धुओंसे निवेदन करता हूँ कि इस कल्याण-कार्यमें अधिकाधिक सहयोग देकर श्रेयके भागी बनें।

धार्मिक कार्योंमें धर्माचार्योंका आदेश सर्वोपरि

[श्रीहनुमानप्रसादजी धानुका, कलकत्ता]

नवीन काशीविश्वनाथमन्दिरका निर्माण जिन परिस्थितियोंवश हुआ, इस विषयमें विद्वान् लेखकवृन्द पर्याप्त प्रकाश डाले होंगे एवं 'नया विश्वनाथमन्दिर क्यों?' (काशीविश्वनाथमन्दिरका इतिहास) पुस्तकमें भी बड़े विस्तृत रूपसे चर्चा की गयी है। काशीके सन्त, महात्मा, धर्मशास्त्रोंके पारंगत विद्वान्, धर्माचार्योंने चिरकालतक चिन्तन करके यह निर्णय किया है कि नवीन विश्वनाथमन्दिरका निर्माण परमावश्यक है। शास्त्रोंके तात्पर्यको समझनेकी सर्वसाधारणकी बुद्धि नहीं होती है। जैसे चिकित्सा, कानून, वास्तुकला आदि कार्य तत्तत् वेत्ताओंसे पूछकर किया जाता है, उनका ही निर्णय उन-उन कार्योंमें मान्य करना पड़ता है, उसी तरह धार्मिक विषयमें भी धर्माचार्योंका ही आदेश सर्वमान्य होना चाहिये और उसके अनुसार चलनेसे ही कल्याण होता है। अपनी बुद्धिसे कार्योंको तोलना ठीक नहीं। पूज्यपाद अनन्तश्री स्वामी करपात्रीजी महाराज, जिनको तपस्याके प्रभावसे समस्त शास्त्रोंका पूर्ण ज्ञान हो गया है, इनके नेतृत्वमें काशीके उच्च कोटिके समस्त विद्वानोंने जो निर्णय किया, उसे सभीको मान्य करना चाहिये; क्योंकि धार्मिक कार्योंमें धर्माचार्योंका आदेश ही सर्वोपरि होता है। नवीन विश्वनाथमन्दिर धार्मिक जगत्‌की एक ऐतिहासिक घटना है, इसका मूल्यांकन भविष्य करेगा। ऐसी विशेष घटनाओंके मूल्यांकन करनेकी यथार्थ शक्ति वर्तमानमें नहीं होती है।

स्तुति-प्रार्थना

श्रीविश्वनाथाष्टकम्

गङ्गातरङ्गरमणीयजटाकलापं
गौरीनिरन्तरविभूषितवामभागम्।
नारायणप्रियमनङ्गमदापहारं
वाराणसीपुरपतिं भज विश्वनाथम्॥ १॥
वाचामगोचरमनेकगुणस्वरूपं
वागीशविष्णुसुरसेवितपादपीठम्।
वामेन विग्रहवरेण कलत्रवन्तं
वाराणसीपुरपतिं भज विश्वनाथम्॥ २॥
भूताधिपं भुजगभूषणभूषिताङ्गं
व्याघ्राजिनाम्बरधरं जटिलं त्रिनेत्रम्।
पाशाङ्कुशाभयवरप्रदशूलपाणिं
वाराणसीपुरपतिं भज विश्वनाथम्॥ ३॥

जिनकी जटाएँ गंगाजीकी लहरोंसे सुन्दर प्रतीत होती हैं, जिनका वामभाग सदा पार्वतीजीसे सुशोभित रहता है, जो नारायणके प्रिय और कामदेवके मदका नाश करनेवाले हैं, उन काशीपति विश्वनाथको भज॥ १॥

वाणीद्वारा जिनका वर्णन नहीं हो सकता, जिनके अनेक गुण और अनेक स्वरूप हैं, ब्रह्मा, विष्णु, और अन्य देवता जिनकी चरणपादुकाका सेवन करते हैं, जो अपने सुन्दर वामांगके द्वारा ही सपत्नीक हैं, उन काशीपति विश्वनाथको भज॥ २॥

जो भूतोंके अधिपति हैं, जिनका शरीर सर्परूपी गहनोंसे विभूषित है, जो बाघकी खालका वस्त्र पहनते हैं, जिनके हाथोंमें पाश, अंकुश, अभय, वर और शूल हैं, उन जटाधारी त्रिनेत्र काशीपति विश्वनाथको भज॥ ३॥

शीतांशुशोभितकिरीटविराजमानं
भालेक्षणानलविशोषितपञ्चबाणम् ।
नागाधिपारचितभासुरकर्णपूरं
वाराणसीपुरपतिं भज विश्वनाथम्॥ ४॥
पञ्चाननं दुरितमत्तमतङ्गजानां
नागान्तकं दनुजपुङ्गवपन्नगानाम्।
दावानलं मरणशोकजराटवीनां
वाराणसीपुरपतिं भज विश्वनाथम्॥ ५॥
तेजोमयं सगुणनिर्गुणमद्वितीय-
मानन्दकन्दमपराजितमप्रमेयम् ।
नागात्मकं सकलनिष्कलमात्मरूपं
वाराणसीपुरपतिं भज विश्वनाथम्॥ ६॥
रागादिदोषरहितं स्वजनानुरागं
वैराग्यशान्तिनिलयं गिरिजासहायम्।

जो चन्द्रमाद्वारा प्रकाशित किरीटसे शोभित हैं, जिन्होंने अपने भालस्थ नेत्रकी अग्निसे कामदेवको दग्ध कर दिया, जिनके कानोंमें बड़े-बड़े साँपोंके कुण्डल चमक रहे हैं, उन काशीपति विश्वनाथको भज॥ ४॥

जो पापरूपी मतवाले हाथियोंके मारनेवाले सिंह हैं, दैत्यसमूहरूपी साँपोंका नाश करनेवाले गरुड हैं तथा जो मरण, शोक और बुढ़ापारूपी भीषण वनको जलानेवाले दावानल हैं, ऐसे काशीपति विश्वनाथको भज॥ ५॥

जो तेजपूर्ण, सगुण, निर्गुण, अद्वितीय, आनन्दकन्द, अपराजित और अतुलनीय हैं, जो अपने शरीरपर साँपोंको धारण करते हैं, जिनका रूप ह्रास-वृद्धिरहित है, ऐसे आत्मस्वरूप काशीपति विश्वनाथको भज॥ ६॥

जो रागादि दोषोंसे रहित हैं, अपने भक्तोंपर कृपा रखते हैं, वैराग्य और शान्तिके स्थान हैं, पार्वतीजी सदा जिनके साथ रहती हैं,

माधुर्यधैर्यसुभगं गरलाभिरामं
वाराणसीपुरपतिं भज विश्वनाथम्॥ ७ ॥
आशां विहाय परिहृत्य परस्य निन्दां
पापे रतिं च सुनिवार्य मनः समाधौ।
आदाय हृत्कमलमध्यगतं परेशं
वाराणसीपुरपतिं भज विश्वनाथम्॥ ८ ॥
वाराणसीपुरपतेः स्तवनं शिवस्य
व्याख्यातमष्टकमिदं पठते मनुष्यः।
विद्यां श्रियं विपुलसौख्यमनन्तकीर्तिं
सम्प्राप्य देहविलये लभते च मोक्षम्॥ ९ ॥
विश्वनाथाष्टकमिदं यः पठेच्छिवसन्निधौ।
शिवलोकमवाप्नोति शिवेन सह मोदते॥ १०॥

॥ इति श्रीमहर्षिव्यासप्रणीतं श्रीविश्वनाथाष्टकं सम्पूर्णम्॥

जो धीरता और मधुर स्वभावसे सुन्दर जान पड़ते हैं तथा जो कण्ठमें गरलके चिह्नसे सुशोभित हैं, उन काशीपति विश्वनाथको भज॥ ७॥

सब आशाओंको छोड़कर, दूसरोंकी निन्दा त्यागकर और पापकर्मसे अनुराग हटाकर, चित्तको समाधिमें लगाकर, हृदयकमलमें प्रकाशमान परमेश्वर काशीपति विश्वनाथको भज॥ ८॥

जो मनुष्य काशीपति शिवके इस आठ श्लोकोंके स्तवनका पाठ करता है, वह विद्या, धन, प्रचुर सौख्य और अनन्त कीर्ति प्राप्तकर देहावसान होनेपर मोक्ष भी प्राप्त कर लेता है॥ ९॥

जो शिवके समीप इस 'विश्वनाथाष्टक' का पाठ करता है, वह शिवलोक प्राप्त करता और शिवके साथ आनन्दित होता है॥ १०॥

॥ इस प्रकार श्रीमहर्षिव्यासप्रणीत श्रीविश्वनाथाष्टक सम्पूर्ण हुआ॥

भगवान् गङ्गाधरकी आरती

ॐ जय गङ्गाधर जय हर जय गिरिजाधीशा।
त्वं मां पालय नित्यं कृपया जगदीशा॥
ॐ हर हर हर महादेव॥
कैलासे गिरिशिखरे कल्पद्रुमविपिने।
गुञ्जति मधुकरपुञ्जे कुञ्जवने गहने॥
कोकिलकूजित खेलत हंसावन ललिता।
रचयति कलाकलापं नृत्यति मुदसहिता॥
ॐ हर हर हर महादेव॥
तस्मिल्ललितसुदेशे शाला मणिरचिता।
तन्मध्ये हरनिकटे गौरी मुदसहिता॥
क्रीडा रचयति भूषारञ्जित निजमीशम्।
इन्द्रादिक सुर सेवत नामयते शीशम्॥
ॐ हर हर हर महादेव॥
बिबुधबधू बहु नृत्यत हृदये मुदसहिता।
किन्नर गायन कुरुते सप्त स्वरसहिता॥
धिनकत थै थै धिनकत मृदङ्ग वादयते।
क्वण क्वण ललिता वेणुं मधुरं नाटयते॥
ॐ हर हर हर महादेव॥
रुण रुण चरणे रचयति नूपुरमुज्ज्वलिता।
चक्रावर्ते भ्रमयति कुरुते मां धिक तां॥
तां तां लुप चुप तां तां डमरू वादयते।
अंगुष्ठांगुलिनादं लासकतां कुरुते॥
ॐ हर हर हर महादेव॥

कर्पूरद्युतिगौरं पञ्चाननसहितम्।
त्रिनयनशशिधरमौलिं विषधरकण्ठयुतम्॥
सुन्दरजटाकलापं पावकयुतभालम्।
डमरुत्रिशूलपिनाकं करधृतनृकपालम्॥
ॐ हर हर हर महादेव॥
मुण्डै रचयति माला पन्नगमुपवीतम्।
वामविभागे गिरिजारूपं अतिललितम्॥
सुन्दरसकलशरीरे कृतभस्माभरणम्।
इति वृषभध्वजरूपं तापत्रयहरणम्॥
ॐ हर हर हर महादेव॥
शङ्खनिनादं कृत्वा झल्लरि नादयते।
नीराजयते ब्रह्मा वेद-ऋचां पठते॥
अतिमृदुचरणसरोजं हृत्कमले धृत्वा।
अवलोकयति महेशं ईशं अभिनत्वा॥
ॐ हर हर हर महादेव॥
ध्यानं आरति समये हृदये अति कृत्वा।
रामस्त्रिजटानाथं ईशं अभिनत्वा॥
संगतिमेवं प्रतिदिन पठनं यः कुरुते।
शिवसायुज्यं गच्छति भक्त्या यः शृणुते॥
ॐ हर हर हर महादेव॥

भगवान् महादेवकी आरती

हर हर हर महादेव !
सत्य, सनातन, सुन्दर, शिव ! सबके स्वामी।
अविकारी, अविनाशी, अज, अन्तर्यामी॥ १ ॥ हर हर० ॥
आदि, अनन्त, अनामय, अकल, कलाधारी।
अमल, अरूप, अगोचर, अविचल, अघहारी॥ २ ॥ हर हर० ॥
ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर, तुम त्रिमूर्तिधारी।
कर्ता, भर्ता, धर्ता तुम ही संहारी॥ ३ ॥ हर हर० ॥
रक्षक, भक्षक, प्रेरक, प्रिय, औढरदानी।
साक्षी, परम अकर्ता, कर्ता, अभिमानी॥ ४ ॥ हर हर० ॥
मणिमय-भवन-निवासी, अति भोगी, रागी।
सदा श्मशान विहारी, योगी वैरागी॥ ५ ॥ हर हर० ॥
छाल-कपाल, गरल-गल, मुण्डमाल, व्याली।
चिताभस्मतन, त्रिनयन, अयनमहाकाली॥ ६ ॥ हर हर० ॥
प्रेत-पिशाच-सुसेवित, पीतजटाधारी।
विवसन विकट रूपधर, रुद्र प्रलयकारी॥ ७ ॥ हर हर० ॥
शुभ्र-सौम्य, सुरसरिधर, शशिधर, सुखकारी।
अतिकमनीय, शान्तिकर, शिवमुनि-मन-हारी॥ ८ ॥ हर हर० ॥
निर्गुण, सगुण, निरञ्जन, जगमय, नित्य-प्रभो।
कालरूप केवल हर ! कालातीत विभो॥ ९ ॥ हर हर० ॥
सत्, चित्, आनँद, रसमय, करुणामय धाता।
प्रेम-सुधा-निधि, प्रियतम, अखिल विश्व-त्राता॥ १० ॥ हर हर० ॥
हम अति दीन, दयामय ! चरण-शरण दीजै।
सब बिधि निर्मल मति कर अपनो कर लीजै॥ ११ ॥ हर हर० ॥

काशीविश्वनाथमन्दिरके संस्थापक महापुरुष

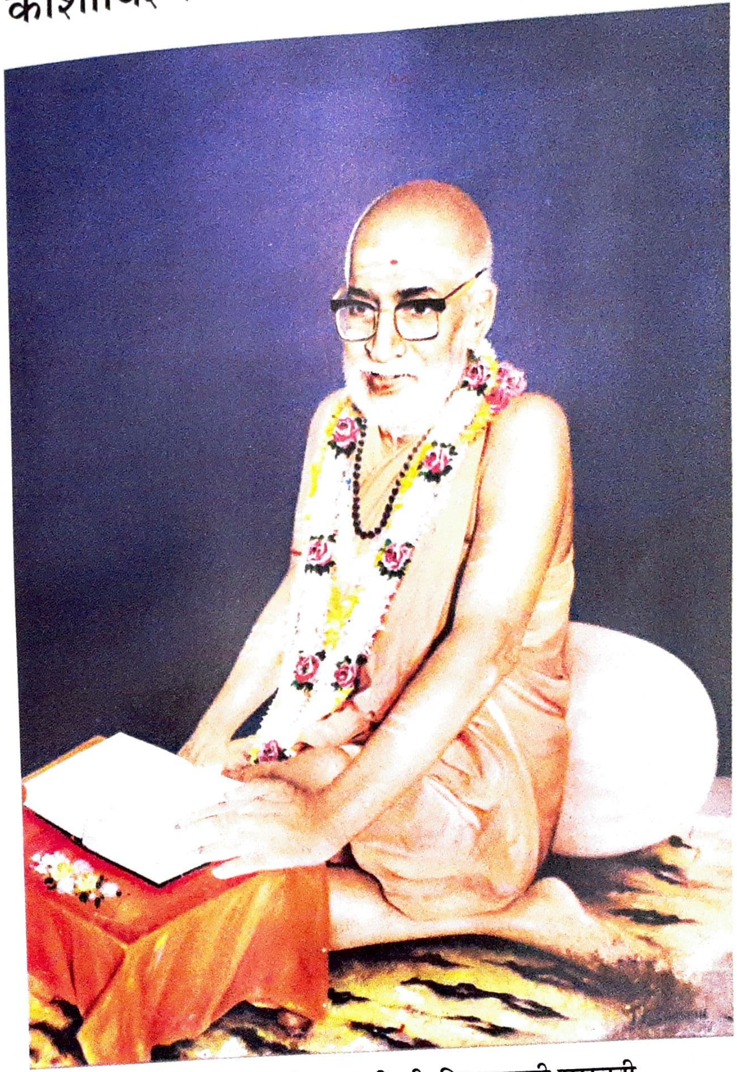

१०-अनन्तश्रीविभूषित स्वामी श्रीहरिहरानन्दजी सरस्वती
(अभिनवशंकर श्रीकरपात्रीजी महाराज)
[१९०७—१९८१ ई०]

॥ तुभ्यं नमः सुरेशान नन्दीश्वर नमोऽस्तु ते ॥

कदा वाराणस्यां विमलतटिनीतीरपुलिने
चरन्तं भूतेशं गणपतिभवान्यादिसहितम्।
अये शम्भो स्वामिन् मधुरडमरूवादन विभो
प्रसीदेत्याक्रोशन् निमिषमिव नेष्यामि दिवसान्॥

काशीजीमें श्रीगंगाजीके परम पवित्र तीरपर, गौरी और गणेश आदिसहित घूमते हुए भगवान् भूतनाथको 'हे शम्भो! हे स्वामिन्! हे मधुर-मधुर डमरू बजानेवाले सर्वव्यापक प्रभो! प्रसन्न होइये'—ऐसा कहते हुए अपने दिनोंको क्षणके समान कब बिताऊँगा?